प्रकाशक—
हिन्दी साहित्य मन्दिर
बड़ौत (मेरठ)

पुस्तक का श्रेय यदि कुछ है, तो वह भाई रामेश्वर प्रसाद
'करण' को ही है, जिन्हें परीक्षार्थियों की सर्वदा अगाध चिन्ता रहती
जिनकी प्रबल प्रेरणा ही वस्तुतः पुस्तक का कारण बनी है।

दोषों से बचना बहुत कठिन है। अवश्य आये होंगे कहीं न कहीं,
और हीनतावश लेखक उनके लिए क्षमा-प्रार्थी है। अविलम्ब में,
होने पर, परिमार्जन का विश्वास दिलाता है।

विनीत—
—लेखक

वीरगाथा काल

प्रारंभिक परिचय

प्रश्न – हिन्दी क्या है ? संक्षिप्त परिचय दो।

उत्तर—हिन्दी वर्तमान में भारत की सर्व-प्रमुख, सर्वाधिक-व्याप्त और सर्वसम्मत राष्ट्र-भाषा है। इसको थोड़े बहुत उच्चारण-भेद या अन्य रूपों की भेद के साथ भारत की लगभग ३० कोड की जन-संख्या ५–६ भाषाओं में बोलती है। पहिले देश भाषा या 'भाखा' के नाम से प्रचलित इस भाषा का हिन्दवी या हिन्दी नाम मुसलमानों ने रक्खा था।

अपभ्रंश के पश्चात् हिन्दी ही वस्तुतः सच्चे रूपमें भारत की प्रतिनिधि भाषा रही है, जिसमें हमारे (भारत के) समय समय पर परिवर्तित होते हुए परिवेशों का, सांस्कृतिक दशा का स्पष्ट प्रतिबिम्ब वर्तमान है। अपभ्रंश से हिन्दी का साक्षात् सम्बन्ध होता है, अतएव परम्परा से भी यही अपभ्रंश की उत्तराधिकारी हुई। इस उत्तराधिकार को इसने कहां तक निबाहा है, यह इसके आज तक के साहित्य के अनुशीलन से स्पष्ट सार होता है। इसका साहित्य किसी भी काल में उनसे पृथक् होकर नहीं चला। गत एक हजार वर्षों की भारतीय समाज की परिवर्तमान दशा का हिन्दी-साहित्य में स्पष्ट और उज्ज्वल चित्र है, जो कि इसके (हिन्दी के) भारतीय या [illegible] का [illegible]। यही हिन्दी भी प्रतिनिधि राष्ट्र-भाषा की [illegible] इसकी अन्य विशेषताओं में ही प्रमा- [illegible] में राष्ट्र भाषा या अन्तर्भारतीय

प्रश्न—हिन्दी साहित्य का काल-विभाग किस आधार पर और कि भागों में किया गया है ?

उत्तर—हिन्दी साहित्य के काल का विभाग उन विशेष प्रवृत्ति के आधार पर किया गया है, जो समग्र-विशेष के साहित्य में उस का अधिकांश रचनाओं में समान रूप से उपलब्ध होती है। अर्थात् यदि समग्र की अधिकांश प्रवृष्ट रचनाओं में वीरता की भावनाएं अधिक होती हैं तो चाहे उस काल में १०० में २२ पंक्तियां अन्य प्रकार का साहित्य उपलब्ध होता हो तो भी हम उसे वीरकाल ही कहेंगे। उसमें अधिकांश रचनाएं वीर रस की हैं।

इस आधार पर हिन्दी साहित्य को तीन भागों में विभक्त किया है: १ आदि-युग (वीर गाथा काल) १०५० से १४०० तक, २ मध्य (भक्ति काल और रीतिकाल) १४०० से १९०० तक, ३, आधुनि (गद्यकाल) १९०० से आज तक। इस प्रकार हिन्दी साहित्य के इतिह सुविधापूर्वक, सरलतापूर्वक और अधिक ज्ञान प्राप्त करने के लिए उसे २ प्रवृत्तियों के आधार पर उपयुक्त तीन भागों में बांट दिया गया है। कोई कोई आचार्य इस एक हजार या सौ सौ वर्ष के काल को वीर-गाथा भक्ति,रीति और गद्यकाल के नाम से पृथक् २ चार भागों में विभक्त करते हैं। अन्तर कुछ नहीं।

वीरगाथा काल

प्रश्न—वीर गाथाकाल के भारतीय समाज की धार्मिक, ऐतिहासिक और राजनैतिक परिस्थितियों पर संक्षिप्त प्रकाश डालिये।

उत्तर—[illegible]

।य का सर्व-प्रथम ग्रन्थ उपलब्ध होता है ।

उत्तर—इस काल में दो भाषाएं उपलब्ध होती हैं, एक अपना रूप हुई हुई अपभ्रंश या प्राकृताभास और दूसरी सार्वदेशिक भाषा के रूप में ीयमान होकर अपभ्रंश का स्थान लेती हुई देशभाषा या हिन्दी। प्राकृ बाद अपभ्रंश का राज्य रहा, लोकवाङ्मय में भी और साहित्य में भी। किन्तु य आकर यह केवल साहित्य की ढकती उतरती हुई माया रह गई थी। ोकवाङ्मय के लिए आम लोग देश भाषा का ही आश्रय लेते थे। लेकिन र्म, नीति, शृंगार और अन्य रसात्मक ग्रन्थ आदि साहित्यिक ग्रन्थ अप ी अपभ्रंश में ही होते थे। चतुर विद्वान् और पण्डित लोग देश भाषा ं लिखना हीन समझते थे। देशभाषा में छन्द-प्रबन्ध (रचना) प्रारम्भ ो जाने के पश्चात् भी अनेक विद्वान् कवि लोग अपभ्रंश को ही विशेषता देते थे।

देश भाषा में लिखने वाले लोग भी अपने पाण्डित्य-प्रदर्शन के लिए ोड़ी अधिक कोई कम उसमें अपभ्रंशकी पुट दे देते थे। यह प्रणाली वीरगाथा-काल के अन्त तक भी बराबर बनी रही, होता कि जब तक देश-भाषा भी साहित्यिक उपयोग के योग्य हो चुकी थी और उस में कई अच्छे अच्छे रासो काव्य और शृंगार भक्ति योग पर ग्रन्थ लिखे जा चुके थे। देशभाषा में यद्यपि चन्द से पहिले ही छोटी मोटी मुक्तक रचनाएं, धर्म नीति और शृंगार के विषय की लिखी जाने लगी थीं, पर रूप की स्थिरता हमें देश भाषा में चन्द के काल में ही मिलती है। वहीं से उसका रूप स्थिर और व्यवस्थित हुआ प्रतीत होता है। आगे चल कर, राजपूतों का काल होने के कारण देश-भाषा में राजस्थानी के शब्दों की प्रधानता स्वाभाविक ही थी। कवि, चारण लोग अपने अपने आश्रयदाता राजाओं की स्तुति और वीरता के गान जब गाते थे तो उनकी भाषा में राजस्थानी शब्दों और रूप का अधिक रहना स्वाभाविक ही था। मुसलमानों के साथ संघर्ष के कारण यद्यपि देश भाषा में अरबी फारसी के शब्द आने लगे थे पर क्योंकि इस संघर्ष में प्रधानतया क्षत्रिय वीर थे इस लिए भाषा में भी ओजगुण की मात्रा अधिक रही।

प्राकृताभास (प्राकृत जैसी प्रतीत होने वाली) हुई या अपभ्रंश (क्योंकि ... हुए आने पर प्राकृत के विकृत और ह्रस्व रूप में प्रयुक्त) जाते हैं ।, नाम दिया गया । समय आने पर बोलचाल की यह ... (प्राकृताभास) इतनी प्रसिद्ध हुई कि साहित्य में भी ... प्राकृत को उखाड़ कर उसका स्थान ले लिया । क्योंकि ... अब जन-साधारण से बहुत दूर आ चुकी थी । बहुत ... तक फिर अपभ्रंश या प्राकृताभास का ही राज्य रहा । बोलचाल साहित्य दोनों में इसी का प्रयोग होता रहा । किन्तु उपर्युक्त भाषा के अनुसार एक ओर अपभ्रंश का साहित्यिक रूप कुशल साहित्यिकों के में पड़कर उत्तरोत्तर संस्कृत होकर साधारण जनता के लिए ... होता गया, और उधर दूसरा बोलचाल का रूप भी जनता की प्रवृत्ति परिस्थिति और आवश्यकता के अनुसार अपने भिन्न किन्तु स्वाभाविक रूप में विकसित होता गया । अन्तर्लोकसत्ता दोनों रूप सर्वथा भिन्न हो गये । अप भ्रंश के इस बोलचाल के रूप को देश भाषा या हिन्दी का पूर्वरूप माना गया है । यही देश भाषा वीरगाथा काल की मुख्य भाषा बनी, जिसमें बड़े बड़े लिखे और अन्य रासो लिखे गये । किन्तु रासो ग्रन्थ देश-भाषा में लिखे जाने पर भी अपभ्रंश का साहित्यिक आदर्श रखे थे, वीरगाथा काल में बना हुआ था । विशिष्ट शिक्षित विद्वान् पण्डित लोग धर्म, नीति, दर्शन, योग, काव्य आदि के लिए अपभ्रंश को ही अपनाते थे । साथ देश-भाषा में भी, भाषा—सौन्दर्य की दृष्टि से और अपने पाण्डित्य-प्रदर्शन के लिए अपभ्रंश शब्दों का प्रचुर प्रयोग होता था । किन्तु फिर भी समय के प्रवाह का विरोध सम्भव नहीं था । अपभ्रंश का स्थान धीरे धीरे देश भाषाएं लेती रही थीं । फिर भी अपभ्रंश की धारा अविच्छिन्न गति से वीरगाथा काल अन्त तक बहती रही । इस भाषा में [illegible] की विशेषता और [illegible] भाषा [illegible] सरपा [illegible] एवं अन्तर्भाव साहित्य [illegible] रूप में [illegible] इनमें से

है । किन्तु अनुमान यह है कि इस देशभाषा का जन्म उससे पहिले
हुआ होगा । क्योंकि किसी भी भाषा में कविता तब होती है जब उ
थोड़ा बहुत विकास हो चुकता है । इसके बाद के लगभग डेढ़ सौ वर्षों
इसमें कोई दूसरी रचना इस भाषा में नहीं मिलती । अपभ्रंश के अनुसार
इसमें भी लिखे हुए धर्म, नीति, शृंगार, आदि के दोहे और पद्य अवश्य मि
हैं इस समय में इसका रूप अस्थिर रहा होगा और यह प्राकृ
अपभ्रंश की तरह ही देश-विशेषों में भिन्न २ होगा । इस समय की
अलिखित साहित्यिक सामग्री नहीं मिलती । इसके पश्चात् ११ वीं श
प्रथम भाग में लिखे हुए कुछ एक ताम्रपत्र मिलते हैं, जिनमें
राजाओं की भाषा काव्य के विशेष उपयुक्त और परिमार्जित है ।
प्रतीत होता है कि चन्द के समय तक देश-भाषा का रूप काफी स्थि
चुका था, इसमें कुछ नियम आदि भी बन गये थे और अब यह भा
भाषा समझी जाने लगी थी । किन्तु इसके इस रूप के साथ ही, इसका ए
दूसरा स्वाभाव का अर्ध साधारण रूप भी धीरे २ विकसित हो रहा था,
जिसमें राजस्थानी शब्दों की अधिकता होती थी, और जो भाषा व्याकरण
आदि के नियमों में प्रायः अपभ्रंश के समान थी । देश भाषा के इन्हीं दो रूपों के
नाम इस समय क्रमशः पिंगल और डिंगल प्रसिद्ध थे । अर्थात् साहित्य की श
अर्जित नियमबद्ध भाषा पिंगल कहलाती थी, जिस में पुरोहितों लिखा कर
और इसका दूसरा साधारण बोलचाल का अपरिष्कृत रूप डिंगल कहलाता था,
जिसमें भाटों चारणों द्वारा अपने अपने आश्रयदाता राजाओं की प्रशंसा में
[illegible] के उपयुक्त थे । [illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible] उदाहरण [illegible] है ।

[illegible]

[illegible]

[illegible]

है किन्तु अनुवाद यह है कि इस वैज्ञानिक का नाम उसने [illegible] को
पूछा होगा। क्योंकि किसी भी भाषा में [illegible] है तब इसका
कोश अनुवाद किया जाता है। इसके बाद के [illegible] को उसी
दूसरे कोई दूसरा इसका कोश में नहीं मिलेगा। [illegible] * अनुवाद पर
इसमें भी [illegible], [illegible], आदि के बाद [illegible] मिलने
है इस [illegible] बड़ा होगा और [illegible] और
[illegible] होगा। इस [illegible] को कोई
। इसके [illegible] को [illegible] के
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]

उनके आधार पर कोई ऐतिहासिक विवरण नहीं प्राप्त हो सकता। क्योंकि उस समय के अधिकांश रचनाकार कल्पनाप्रसूत अतिरंजना और कोरी कल्पना से प्रभावित। उनमें ऐतिहासिक तथ्य ढूंढना बहुत कठिन काम है।

यह साहित्य दो रूपों में मिलता है—एक प्रबन्ध रूप जैसे पृथ्वीराज रासो इसी आधार पर इस काल का नाम रखा गया और दूसरा, वीर गीत के रूप में, जैसे, बीसलदेव रासो। इनके अतिरिक्त कुछ फुटकल धर्म, नीति, शृंगार, सूक्तियों, पहेलियों आदि के रूप में उपलब्ध होता है, जिसका यथा स्थान वर्णन आयगा।

✓प्रश्न—वीरगाथा काल में लिखे गये देश-भाषा के मुख्य २ काव्य और उनके कवियों का संक्षेप में पृथक् पृथक् वर्णन करो।

उत्तर—देश भाषा में इस समय दो प्रकार के काव्य लिखे गये—एक प्रबन्ध रूप खुमाण रासो जैसे और दूसरे मुक्तक वीरगीत रूप में बीसलदेव रासो। इन सब ही काव्यों का विषय प्रायः एक जैसा ही है। अपने आश्रय-दाता राजा लोगों के शौर्य, पराक्रम उनके अनेक विवाह और उनके लिये लड़े गए युद्धों का वर्णन है। इस भारतीय इतिहास विशिष्ट राजपूत राजाओं के वर्णन में अवश्य देश-भक्ति का प्रवाह पर, इस काल की अन्य सर्वसाधारण रचनाओं में ये भी कुछ कमी प्रवृत्ति पाई जाती है, जिससे इन काव्यों का वास्तविक इतिहास से कोई सम्बन्ध प्रतीत होता। अधिकतर घटनाएं कल्पित घड़ी हुई होती हैं जो कवियों खुशामद मात्र लगती हैं। ये प्रवृत्तियां न्यूनाधिक मात्रा में इस काल के सभी काव्यकारों में प्राप्त होती हैं, यथा समझ लेना चाहिये।

इस समय की जो विशेष रचनाएं मानी जाती हैं उनका संक्षिप्त परिचय निम्न प्रकार से है—

[illegible] इस समय [illegible] नाम [illegible] वह [illegible] नया [illegible]

अवस्था भी कह सकते हैं। क्योंकि इसमें दोनों के गुण मिलते हैं। यह संयोग और वियोग दोनों दशाओं में है—विभक्तियां शब्दों से भी आई हैं और संस्कृत प्राकृत अपभ्रंश के कुछ कुछ शब्दों में मिली हुई घटना-सामग्री अधिकतर कल्पित है, जिसका इतिहास में कहीं पता नहीं। पुस्तक में एक एक छन्द कई कई बार भिन्न भिन्न स्थलों में आता है। शृङ्गार वर्णन में कहीं कहीं लेखक को बहुत सफलता मिली है, विशेष रानी के-विरह वर्णन में। शैली दरबारी, प्रारम्भिक दशा में ग्रन्थ का भाषा के इतिहास की दृष्टि में जितना महत्व है, उतना साहित्यिक दृष्टि से नहीं।

उदाहरण—दीठउ आनन सागर समंद लखी बहार
हंस गयणी मृग लोचणी नारि॥

इसका काल १२१२, पृथ्वीराज का समकाल है।

२ आल्हाखण्ड, जगनिक—यह भी इसी ढंग का एक वीर गीत रूप काव्य ग्रन्थ है, जिसमें महोबे के चंदेल राजा परमाल के दरबार में बसने वाले जगनिक कवि ने उसके दो परम वीर सामन्त आल्हा और ऊदल के वीरत्व और प्रेम के चरित्र का बड़ा ओजस्वी और जिगल (ग्राम बोलचाल की) भाषा में वर्णन किया है। राजा परमाल पृथ्वीराज का समकालीन और कन्नौज राज जयचन्द के प्रधान सामन्त मित्रों में से था। आल्हा और ऊदल दो भाई उसके परम प्रधान सामन्तों में थे जिनकी वीरता का लोहा जयचन्द तक मानता था। उन्होंने बड़े बड़े संग्राम जीते थे, अनेक सुन्दरी कन्याएं ब्याहीं और अन्त में पृथ्वीराज के साथ जयचन्द का लड़का। कारण इस पुस्तक में ऊदल मारा जाता है और आल्हा संन्यास के बाद ऊदल के पुत्र इन्दल को लेकर योग साधना के लिए चल देता है। जगनिक ने इसके इन समस्त वीर-प्रसङ्गों को अत्यन्त ओजस्वी भाषा में लिखा है जो इतना अधिक है कि आल्हखण्ड की अलग बड़ी बनावटी पुस्तक बन जाती है। जगनिक इसमें अपने [illegible] वीरता और सामन्तों की [illegible] आल्हखण्ड एक कल्पित वर्णन रूप है और जिसका इति

में दर्शनीय नहीं। इसके साथ में अनुमान किया जाता है कि यह किसी वृहद् संग्रह ग्रन्थ का अवशेष है-किन्तु इसके विषय में कभी कोई निश्चित मत नहीं स्थिर हुआ। वस्तुतः यह पुस्तक भाटों और चारणों की वस्तु रही जो राजा महाराजाओं पर आश्रित रहते थे। इसके वर्णनों में और बोध होती रही। भाषा भी प्रायः सर्वत्र एक रूप में नहीं रह पाई। और अब यह रचना जिस रूप में मिलती है उसकी भाषा पृथ्वीराज के समय की भाषा से ठीक अनुकूल नहीं है, जिसके समझने में प्रायः कोई भाषा विशेष कठिनाई नहीं होती सर्वसाधारण को। सो, भाषा विज्ञान की दृष्टि से इसका कोई महत्व नहीं और नहीं ऐतिहासिक दृष्टि से है। भाषा उक्त ऐतिहासिक स्खलित होते हुए भी उसके जिस चरित्र का इसमें वर्णन किया गया है वह अधिकतर कल्पित है, ऐतिहासिक तथ्यों से मेल नहीं खाता। एक उदाहरण देखिये—

दुनी सलामी दोनों दल में चुकना रही मरग मंडराय।
रुंडे मुंडी दोनों दल में, रए में होत लगा घमसान॥

इस ग्रन्थ का काल सं० १२३० माना जाता है।

पृथ्वीराज रासो, चन्दबरदायी—लगभग एक लाख पद्यों, २१ समयों और अनेक अध्यायों में शृंगार और वीररस का अद्भुत और वृहद् यह ग्रन्थ इस काल की सर्व प्रमुख रचना है। इसके कर्ता चन्दबरदायी को महाकवि की उपाधि दी गई है। चन्द की जन्मभूमि लाहौर थी और वे महाराज पृथ्वीराज के सखा मन्त्री और राजकवि थे, जो हर समय और हर यात्रा में प्रायः उनके साथ ही रहते थे। वे कई भाषाओं-संस्कृत, प्राकृत अपभ्रंश या डिंगल और पिंगल के अतिरिक्त ही व्याकरण ज्योतिष आदि शास्त्रों के प्रकाण्ड पण्डित थे। [illegible]

वृत्तान्त दिया है। रासो के अनुसार, दिल्ली के राजा अनंगपाल के सुन्दरी और कमला नाम की दो लड़कियां थीं, जिनमें से सुन्दरी का ब्याह कन्नौज के राठौर राजा से हुआ जिससे जयचन्द ने जन्म लिया और दूसरी कमला का अजमेर के चौहान राजा सोमेश्वर के साथ विवाह हुआ, जिससे पृथ्वीराज उत्पन्न हुआ। निःपुत्र अनंगपाल ने दूरदर्शिता से पृथ्वीराज को गोद ले लिया जिससे जयचन्द शत्रुता करने लगा जो अन्त तक चलती रही। पृथ्वीराज के बड़ा होने तक दुर्गों की, देश की, दिशाओं की हमें अच्छी जानकारी है। इधर जयचन्द राजसूय यज्ञ करता है, जिसमें पृथ्वीराज के न आने पर उसकी मूर्ति बनाकर द्वार पर खड़ा कर देता है। जयचन्द की पुत्री संयोगिता का पहले से पृथ्वीराज में प्रेम होने के कारण उसने उसकी मूर्ति के गले में माला डाली, जिससे नाराज होकर उसके पिता ने उसे एक गुप्तवास महल में नजरबन्द कर दिया जहां से पृथ्वीराज अपने सामन्तों की सहायता से उसे उठा ले गया और बड़ा घमासान युद्ध करता हुआ देश और सामन्तों के भारी नुकसान के साथ दिल्ली पहुंचा। रास में दिन दौगने रात चौगुने बढ़ने लगे। ऐसे ही समय शहाबुद्दीन से चढ़ाई की। वह कई बार पहले भी चढ़ाई करके हार के जा चुका था। पृथ्वीराज ने उसे अनेक बार पकड़ कर उदारतापूर्वक छोड़ दिया था। अब के उसके भी जयचन्द भी मिल गया था। इस बार पृथ्वीराज हारा और बन्दी बनाकर गजनी ले जाया गया। वहां उसकी आंखें निकलवा दी गईं। कुछ समय पश्चात् कवि भी वहां पहुंचा और तरकीब से अपने से पृथ्वीराज के शब्द बेधी बा[illegible] समाप्त होती है। [illegible] का ग्रन्थ [illegible] को संग्राम [illegible] अपने में [illegible] है। [illegible] [illegible] आकार छो

१४.१—इसमें निम्न कारणों से पृथ्वीराज रासो की ऐतिहासिकता और प्रामाणिकता के विषय में सन्देह किया जाता है।

१. रासो के कथानक की घटनाएं, सोमेश्वर का अर्णोराज की पुत्री से विवाह, पृथ्वीराज का गौरी द्वारा, राठौर जयचन्द का पृथ्वीराज [redacted] सहायता लेना आदि, इतिहास में नहीं मिलतीं।

२. इसकी भाषा कई शताब्दियों में समय समय पर लिखी गई प्रतीत होती है, अतः यह मूल पुस्तक नहीं हो सकती।

३. इसके सब सम्वत् इसी काल के अन्य इतिहास ग्रन्थों, शिलालेखों, ताम्रपत्रों आदि के सम्वतों से नहीं मिलते। उनमें बहुत अन्तर है, आदि आदि।

किन्तु इतना सब कुछ होने पर भी पृथ्वीराज रासो अपने काल की प्रतिनिधि और सबसे परिचय रचना है, इससे इन्कार नहीं किया जा सकता जयचन्द के दरबार में वर्तमान एक कवि के आधार पर चन्दबरदायी नाम एक कवि पृथ्वीराज के सामन्तों में अवश्य था। उसने अपने राजा की स्तुति में यह ग्रन्थ भी अवश्य लिखा होगा। समय के प्रवाह में आगे आने वालों के हाथों में पड़ कर इसके रूप का कायापलट होता गया—सब समय पर जोड़क अंश भी अवश्य जोड़ दिये गये होंगे। घटनाओं में भी परिवर्तन संभव है। इसी प्रकार संभवतः इस समय एक से अधिक प्रथ्वि थे। कुछ एक इतिहासवेत्ताओं ने अग्नि वंश के शासन काल को निकाल कर इन सबको ऐतिहासिक क्रम में साथ साथ बिठाने का प्रयास किया है। संभव है आगे खोज में इस समय की और अधिक सामग्री मिलने से इस विषय में सन्देह दूर हो सके। तो भी रासो जैसे बृहद् रूप कोटि काव्य ग्रन्थ को ऐतिहासिक रूप कर काम नहीं चल सकता। इसमें उस समय की आत्मा पूर्णतया प्रतिफलित हुई है। और नहीं इसका सर्वांश इतिहास-विरुद्ध है। वस्तुतः तो अभी इस विषय में बहुत छानबीन की आवश्यकता है।

इस समय बने रासो की परम्परा में आगे हम्मीररासो का नाम आता है, जो हम्मीरदेव की स्तुति में है।

कृपया इस काल की प्रथम फुट-कर रचनाएँ कौन सी हैं, जिन्हें आप पिंगल या डिंगल कहेंगे ?

उत्तर—राजो ग्रन्थों की पिंगल और डिंगल भाषाओं के अतिरि[क्त] देश-भाषा के दोहरे और रूप भी विकसित हो रहे थे, एक [ज] जिसमें विद्यापति ने कृष्ण राधा के प्रेम वर्णन के [पद] दूसरा परिमलोत्तरी जिसमें खुसरो ने लिखा।

अबुलहसन अमीर खुसरो—अमीर खुसरो के पूर्वज बलखदुखारा [से] हिन्दी सती के शासन में आकर एटा जिले में पटियाली गांव में आ[कर] हुए थे। खुसरो बड़े विद्वान् और प्रतिभाशाली कवि थे। वे अरबी, फा[रसी] हिन्दी के विद्वान् थे, संस्कृत में भी पर्याप्त परिचय रखते थे। इन्होंने [अपने] जिन्दगी की [illegible] दरबारों में रहे अधिक में दिल्ली के [illegible] हुसैन खैर ख, [illegible] की इन्होंने सेवा की थी। ये बड़ा से ऊपर बड़ा उदार पुरुष थे। इन्हें हिन्दी और उसके साहि[त्य] विशेष प्रेम था। खुसरो, जब हुसैनशाह यहां रह चुके थे, अतः [illegible] उदार हुसैनशाह यह अनुभव कर रहे थे कि [illegible] हुसैनशाह दरबार [illegible]। इसी उद्देश्य से खुसरो[ने] देश भाषा का [illegible] इन्हीं ने खालिकबारी नाम का [illegible] हिन्दी का [illegible] इन्हें हृदय में बहुत आदर [illegible] [illegible] में हिन्दी बात में कम [illegible] [illegible] देश भाषा के लोक [illegible] [illegible] दी हैं। [illegible] [illegible] इन्होंने पु[स्त] [illegible] इनमें से एक

[illegible]

[illegible] आये।

[illegible] [illegible] [illegible] आये ॥ (दिवाकरी

पन्थ रच दिये। हिन्दी में सर्व प्रथम यह धारा ज्ञान को लेकर चली जि कबीर मुख्य हुए। ये लोग ईश्वर और जीव का मुख्यतया ज्ञान के द्वा सम्बन्ध मानते थे और ज्ञान द्वारा ही मुक्ति मानते थे। इस धारा प्रवर्तक कबीर माने जाते हैं।

इसी प्रवाह के पश्चात् या साथ ही साथ कुछ मुसलमान सूफी भी एक नई पद्धति पर काव्य-रचना कर रहे थे। ये थे भी सन्त ही, एकेश्व मानते, पर ये जीव और ईश्वर का सम्बन्ध प्रेम का मानते थे, और इसी द्वारा ईश्वर की उपासना और आत्मसाक्षात्कार प्रेम के द्वारा ही पु (लौकिक स्थूल बन्धन-रहित या जीवन्मुक्त दशा से तात्पर्य है) की ओ में विश्वास करते थे। इनमें अत्तरी का विशेष आदरित आदमी थे। दोनों (ज्ञान मार्गी और सूफी) धाराओं का आधार एक ही था, अर्थात् एकेश्व वाद आदि दार्शनिक सिद्धान्त।

इसी आध्यात्मिक प्रवाह की एक धारा परमात्मा के सगुण रू आधार को लेकर चली। पर ईश्वर और जीव का भक्ति (यह भी रति ही रूप है किन्तु इसमें आदर और श्रद्धा विशेष होती है—अर्थात् देवता विषयक रति को भक्ति या आत्म तृप्ति है।) का सम्बन्ध मानकर चले हैं। इस सगुण धारा की एक शाखा ईश्वर के रामरूप को लेकर चली जिसमें प्रमुख तुलसीदास हुए और दूसरी कृष्ण रूप को लेकर चली, जिस प्रमुख सूरदास हुए।

[illegible]

दिल्ली में हुमायूँ अकबर जैसे उदार शासकों का राज कायम हो चुका था, अलाउद्दीन प्रायः समाप्त हो चुका था। राजे रजवाड़े भी अब आपस में प्रायः नहीं लड़ते थे। मुसलों का हमला अब बंद हो चुका था। हाँ, राजपूताने में प्रताप जैसे सिरफिरे इस तरफ लड़ते ही रहे, जिन परम्परा में आगे चलकर शिवाजी, सिखों, छत्रसाल आदि हुए। किन्तु यह संघर्ष साधारणतः नहीं रहा था और साहित्य में तो प्रायः चारण पर जिनका कोई परिवार नहीं मात्र रह गया था। यह चारण काल अब बार-बार का अवतार लेने वाले की कविताओं में अपने आश्रयदाताओं का प्रचार करने में लगे थे। चारण के लिए कोई विषय भी नहीं रह गया था। मुगलों के लिए किसी राजा की चारण का वर्णन करना (मुगल दरबार में होते हुए) विद्रोह समझा जाता—राजा और भाट दोनों दंडित पाते।

चारणादा काल के समय में जैसे भारत की राजनैतिक शक्ति छिन्न हो गई थी, उसी प्रकार उसकी धार्मिक दृष्टा भी। अवतार [illegible] बौद्ध धर्म को उखाड़ कर अपने अद्वैतवाद का प्रचार करके शंकराचार्य [illegible] अवतार [illegible] आदि तो [illegible] धर्म में अवश्य चलता रहा, पर सर्व साधारण के लिए वह [illegible] ही रहा। जाति भेद में जकड़ा हुआ था। धर्म का [illegible] हो चुका था, ज्ञान अहंकार के कारण पांडित्य का विषय बन गया था, [illegible] का स्थान [illegible] ने ले लिया था। [illegible]

रामानंद रामानन्द को बताया है। ज्ञानाश्रयी शाखा के अनुयायी चतुर हैं, वे ज्ञान के द्वारा शुद्ध ब्रह्म की प्राप्ति में विश्वास करते हैं और सदा अपना जीवन सरलता पवित्रता से बिताना चाहते हैं। वे ईश्वर और का ज्ञान द्वारा सम्बन्ध स्थापित करते हैं। वे सगुण रूप में विश्वास करके "त्रिगुण सगुण से परे" राम में ध्यान लगाते हैं और योग द्वारा विश्वास करते हैं। ज्ञान के द्वारा ही वे हिन्दू मुसलमान और छूतछात जाति-पाति और धर्मकृत भेद भाव से ऊपर रहकर सब में समदृष्टि रखने उपदेश देते हैं। चरित्र द्वारा, ज्ञानपूर्वक मन और प्रेम भाव से भ पालन करने में ही उनके मत से जीवन की पूर्णता है। इस पथ के सा में कवित्व की अपेक्षा, धर्म-समाज-सुधार की भावनाएँ विशेष मिलती वस्तुतः ये कवि सुधारक और सन्त कवि थे। इस पंथ के प्रवर्तक सा कबीर हैं। इन्हीं के (धर्म के, मत के, चरित्र के और भाषा के आदर्शों को लेकर इनके पंथ में आगे अनेक ज्ञानाश्रयी सन्त कवि जिनमें सब नहीं तो अधिकतर अपने को इनका शिष्य मानते थे।

कबीर के आदर्श को सामने रख इस धारा के आगे के प्रायः सभी कवि ने ईश्वर माया, जीव, सृष्टि, लोक-व्यवहार-नीति, गुरु, शब्द और ज्ञान वैराग्य आदि विषयों का इन्हीं की शैली में अपना अपनी विशेषताओं के साथ लिखने का प्रयास किया है।

कबीर—इनका जन्म सन् १४९८ ई० माना जाता है। इनकी जाति के विषय में कुछ निश्चय नहीं। जनश्रुति का ही पता है। पंथ में प्रचलित किंवदन्तियों के आधार पर कुछ विद्वान ब्राह्मणों को इनके रामानन्द के सन्तान में मानते हैं। [illegible] जिसे जीवन भर एक [illegible] मुसलमान जुलाहे [illegible] पाल-पोसकर बड़ा किया [illegible]

[illegible] अपने गुरु के साथ [illegible] कबीर दर्शन [illegible] सन्तों के साथ बैठने की चर्चा करना या [illegible] बताते [illegible]

और रचेंगे। छन्दों में इन्होंने विशेषतया दोहे का प्रयोग किया है और पद लिखे हैं जिनका आधार राग रागनियां हैं।

कबीर साहित्य को विषय वा शैली के आधार पर और भी दो तीन भेदों में बांटा जा सकता है। कुछ तो जिसमें इन्होंने अपना निर्गुण मत-प्रतिपादन आदि किया और के, अन्य के, लोगों के अन्य के रहस्यों का वर्णन किया देना है जिसमें इन्होंने प्रचलित कोड का कुछ खण्डन किया है। इस में इसका [illegible] देना भी है कि को [illegible]

और रमैनी। इन्हों में इन्होंने विशेषतया दोहे का प्रयोग किया है और पद जिनके आधार राग रागनियाँ हैं।

कबीर साहित्य को विषय या शैली के आधार पर और भाई भी दो तीन भेदों में बाँटा जा सकता है। कुछ तो ऐसा है जिसमें इन्होंने अपना सिद्धांत मत-प्रतिपादन आदि किया है, ईश्वर प्रेम के, ब्रह्म के, तत्वों के अलख के रहस्यों का वर्णन किया है। कुछ ऐसा है जिसमें इन्होंने प्रचलित अनेक मत-मतान्तरों का सामाजिक कुरीतियों का कड़ा खण्डन किया है। इस में इन्होंने हिन्दू मुसलमान दोनों को नहीं क्षमा किया है। कुछ ऐसा भी है जिसमें इन्होंने अपने आध्यात्मिक आनन्द को अनुभूतियों का अनेक रूपों में, उलटबाँसी और रूपक में वर्णन किया है। और कुछ ऐसा है जो रहस्य मूलक वर्णन है, जिसे रहस्यवाद भी कहते हैं, ऐसा साहित्य अत्यल्प है।

प्रश्न—कबीर की भाषा पर विचार करते हुए उनका एक विचार लिखिये।

उत्तर—कबीर की भाषा खिचड़ी है जिसका कारण उस समय परिस्थितियाँ थीं। वह घूमते थे और भी इन्हें यात्रायें और सभाएँ आदि इस प्रकार की करनी पड़ती थीं। कबीर ने इस भाषा को अधिकतर पूर्वी रूप में प्रयोग किया। भाषा का यह रूप प्रारंभिक था अपरिष्कृत था। यही भाषा कबीर की भाषा में भी है। यह अपरिष्कृत, व्याकरण के नियमों से अधिक दूर है, अरबी भाषाओं के शब्दों से भरी है, संस्कृत के तत्सम शब्द हैं कारक, प्रत्यय, विभक्ति आदि भी भिन्न २ भाषाओं के हैं। कि-तु यह कुछ भी हो यह समर्थ है, उसमें सुगम है शक्ति है, स्वाभाविकता और रस है। अलंकार-भाव अवश्य है पर कबीर को अपना विशेषता लिये स्वतन्त्रता है।

प्रश्न—कविता की दृष्टि से कबीर साहित्य पर विचार कीजिये।

उत्तर—कविता की दृष्टि से कबीर साहित्य में बहुत कमी है। उन्होंने काव्य-उत्कर्षता का उद्देश्य नहीं किया है। उनके दोहे अटपटे हैं, उनमें चार अस्वाभाविक और उलझाव अलंकार भरे हैं, जिन्हें छूट गये हैं।

अनेक कारणगत दोष आ गये हैं। इसका कारण कुछ तो कबीर का काव्य नियमों से अनभिज्ञ होना है और कुछ प्राचीन परिपाटियों से विद्रोह व स्वतन्त्रता की उनकी प्रवृत्ति भी है। उन्होंने जान बूझ कर भी काव्यनियम की अवहेलना की है (क्योंकि वस्तुतः उनका उद्देश्य कविता करना नहीं था, कविता उनके लिए एक शक्तिशाली साधन का काम दे रही थी।) और उनको उनका ज्ञान भी नहीं था। जो भी कारण हो दोष स्वरूप को छोड़कर पूरा मिलता है, विशेषतः वहां उन्होंने अपनी रहस्यमूलक दार्शनिक विचारों का वर्णन किया है और उनके पदों में। इसके इकारा, उसके दुश्मन हैं, दमकार हैं और शक्ति वहां तक उसके आन्तरिक भाव राव का प्रश्न है, वह कबीर-साहित्य में है। वस्तुतः तो कबीर झाड़ी सन्त और कुशल पांसे थे और कवि पीछे।

कबीर के साहित्य से एक दो उदाहरण देखिये:—

चलती चाकी देखि के दिया कबीरा रोय।
दो पाटन के बीच में साबुत रहा न कोय॥
पूरा सोई सराहिये जड़े धर्म के हेत।
पुरजा पुरजा होइ रहै तऊ न छांड़ै खेत॥
आदि आदि॥

प्रश्न—इस शाखा के अन्य कवियों का संक्षेप में परिचय दो।

उत्तर—रूप, सिद्धान्त, साहित्य और भाषा शैली की दृष्टि से आगे आने वाले प्रायः सभी सन्त कवि लगभग एक जैसी विशेषता रखते हैं। इन्होंने कबीर के समान, शब्द, ब्रह्म, योग, माया, जीव, जगत्, नाम, गुरु का गुण गाये हैं और नीति, लोक व्यवहार, आडम्बरों की निन्दा, लोभ की, ऊंच नीच के भेद-भाव की निन्दा और शुद्धता, सरलता, परिश्रम की प्रशंसा आदि पर भी लिखा है। उनमें कुछ एक ने अपने अपने थोड़ी सी विभिन्नता के साथ अलग अलग मत भी चलाये, पर वे सब कबीर-पन्थी कहलाते हैं। सब निर्गुण ब्रह्म के उपासक, आडम्बरों से दूर, सत्य आचरण-पूर्ण जीवनयापन द्वारा ज्ञान-उपासना करने का उपदेश देते हैं। इनमें से कुछ एक मुख्य निम्न हैं:—

गुरु नानक—ये सम्वत् १५२६ में जिला लाहौर के तलवंडी... कालूचन्द नामक खत्री के घर उत्पन्न हुए थे। ये जन्म से वैरागी थे। इनका घर के काम-काज, व्यवसाय में मन नहीं लगता था। ये घर से देशाटन को निकल पड़े और इनका मदीना, मक्का इत्यादि तक घूम कर वापिस आये थे। इनकी कबीर से भेंट हुई और उनके अनुयायी बन गये। वहाँ से आकर ये हिन्दू मुसलमानों के धार्मिक संघर्ष से दूर शान्त पंजाब में अपने मत का प्रचार करने लगे। आगे चल कर ये ही सिख सम्प्रदाय के आदि-गुरु हुए। कबीर की तरह इनकी वाणी भी सीधी-सादी, सरल स्वाभाविक सौन्दर्य लिये, कृत्रिमता से दूर है और इन्होंने भी हठ, अनहद, आदि योग के कष्टों, जीव, ईश्वर, माया, ब्रह्म, शब्द, जगत् का दोहों, शब्दों चौपाइयों में वर्णन किया है। जगत् को मिथ्या बता कर, आडम्बर और भेद-भाव से ऊपर रह कर, सत्य, न्याय, दयापूर्वक आचरण करते जीवन बिताने का आदेश दिया है। इनकी भाषा में पंजाबी की अधिकता स्वाभाविक रूप से आ गई है, वैसे वह कबीर वाली ही है। उदाहरण —

हम घर पूत सजन की बेटा, आया आया न आया न आया।
यह संसार सैन का सुपना, कहीं देखा कहीं न दिखाया॥

दादूदयाल—ये १५०१ में अहमदाबाद में उत्पन्न [illegible] थे। इनकी जाति के विषय में सन्देह है, कोई इन्हें ब्राह्मण और कोई चमार या धुनिया कहते हैं। इनकी रुचि भी जगत् की ओर नहीं थी। इनके गुरु का पता नहीं, पर इन्होंने अपनी कविता में कबीर का नाम बहुत बार सादर लिया है, इसलिये विश्वास किया जाता है कि ये कबीर को गुरु मानते थे। १५९० में इन्होंने जयपुर राज्य में एक अरावली की पहाड़ी पर शरीर छोड़ा। इन्होंने भी अपनी वाणी में शब्द नाम, गुरु, ईश्वर आदि का वर्णन किया है। इनके मत में तर्क की अपेक्षा हृदय की अनुभूति का अधिक महत्व है। एक उदाहरण लीजिये —

[illegible] हमारा।
[illegible] पूरा॥

उत्तर—कविवर की दृष्टि में निर्गुण संत साहित्य का भले ही महत्व न हो, पर सदगुरु की आवश्यकता को पूरा करने का यहाँ एक प्रयत्न है इसको देन कमजोर है। भारतीय आत्मा के वर्षों निकट और आदरास्पद इन्होंने (संतों ने) उसके दुख और अविश्वास को बल दिया। इस संत साहित्य का दृष्टिकोण अनुभव सिद्ध वर्गों से था, इसलिये इस ओर कम ध्यान गया। पर सर्वसाधारण के प्रति जो इनका दृष्टिकोण था, वह भूल योग्य नहीं। भारतीय जिज्ञासु में संत साहित्य का विशेष योग है।

— ★ —

प्रेममार्गी शाखा

(सूफी कवि)

प्रश्न—हिन्दी में प्रेम मार्गी सूफी साहित्य का एक साधारण किंतु संक्षिप्त परिचय दो।

उत्तर—जब मुसलमान इस देश में आकर बस गये और उनका राज्य स्थापित हो गया तो उनके साथ अनेक मुसलमान महात्मा फकीर लोग भी आये थे और यहीं रह गये थे। उनमें अनेक सिंध वाले महात्मा भी थे। उन्हीं में कुछ सूफी फकीर या मुसलमान हिंदुओं कवि भी थे। उन्होंने यहां आने पर अपने और यहां के दार्शनिक सिद्धान्तों में बहुत एकता पाई। वे यहां की आध्यात्मिक, यौगिक सिद्धियों से प्रभावित हुए बिना नहीं रहे। दूसरे, उनके अतिरिक्त अन्य समझदार उदार मुसलमान भी थे, जो यह जानते थे कि मुसलमानों को अब यहां के लोगों में ही रहना है इसलिए उन्होंने सबसे दोनों हिन्दूमुसलमान धर्मों का और संस्कृतियों का भेद-भाव मिटाकर विजेता और विजित में एकीकरण या समन्वय उपस्थित करने का चेष्टा की। सूफी लोग इस कार्य में सब के आगे आये क्योंकि उनके सिद्धान्तों में संकुचितता को स्थान नहीं था। वे तो एकेश्वरवादी और ईश्वर को अकथ्य प्रेम का आगार देखते थे—उसी के प्रेम का झरना उन्हें सर्वत्र नजर आता था। वे लौकिक प्रेम में भी अलौकिकता देखते थे और लौकिक प्रेम के द्वारा ही अलौकिक प्रेम को

मन्तु हो जाती है। सखियाँ आती होती हैं। कवि ने विरह, मिलन
वर्णन में बड़ा सरसता की व्यंजना है। एक उदाहरण :—

दखियो पुनि पैसे ही करी जहँ
कुवरी अरु [redacted] लखि जहँ
बातन बात अनंद बढ़ बोई।
बर बादर को हरे न कोई॥

प्रसंग—इसके बाद का कुछ पता नहीं। पर क्योंकि जायसी ने इ
अनेक बार अपनी पुस्तक में वर्णन किया है इस लिए निश्चित है वे
पूर्व का इसके बाद का हो। इन्होंने अन्य जायसी आदिक से
किया, जिसकी कथा कुछ अपूर्ण और अटपट होती है। इसकथानायकों की
कथानक की शिथिलता, वर्णन वैचित्र्य, प्रकृति वर्णन और रस अलंकार
दृष्टि से अधिक सुन्दर है पर यह बहुत छोटा लिखता है। इसका कथा
संक्षेपतः इस प्रकार है —

कलेसर के राज कुमार अमोहर को बचपन खोते हुए को मदनसर की
कुमारी मधुमालती के चित्र से आती है। दोनों एक दूसरे को देख
परस्पर आसक्त हो जाते हैं। पतियाँ फिर राजकुमार को घर छोड़ आती
राजकुमार विरह में व्याकुल हो उसकी खोज में योगी बन निकलता है।
में समुद्र में खोज हुए प्राण पर अंगदों से अरक्षता है। वहाँ वह चित्र
पुर की राज कुमारी मनोहरा के एक सखा से बचाता है, पर उसके चि
कहने पर भी उससे विवाह को तैयार नहीं होता। मनोहरा के वहाँ हवे
मालती फिर मिलता है किन्तु इस मिलन से कुछ होकर मधुमालती
मां उसी रात्रि में पक्षी बना कर उड़ा देती है। इसे एक ओर तारा
नामक राज कुमार पकड़ ले जाता है किन्तु उसकी कन्या सुन इसे उसके
पिता [redacted] पास ले जाकर बताता है और वह संघ बद्ध से फिर अपने असली रू
आजाती है। तारा चन्द्र उससे विवाह को राजी नहीं होता। इस
मन हर को बुला कर लाने को भेजता है। एक दिन राजकुमार तारावट
फूलते प्र मा को देख कर उसे ले जाता है। वहाँ से आगे प्रति
है। एक उदाहरण दीजिये —

सीमा का नहीं है, विशेषतः जहाँ उसकी आवश्यकता और लाभदायिकता
होती है वहाँ पृथ्वी पर अनेक पदार्थों की सृष्टि निर्माण करने में
देरी होने व आवश्यकता की वस्तुओं के प्रति अपनी आकांक्षा पूर्ण
होने की मात्रा के अतिरिक्त इस प्रवृत्ति का और क्या कारण हो सकता
इस बात का इन्हें उपयुक्त कवि माना जाता है। पद्मावत का कथा संक्षेप
यह है।

सिंहलद्वीप के राजा गन्धर्व सेन की पुत्री पद्मावती चित्र-सृष्टि की
पर दोष घर के अभाव में विवाह नहीं हुआ था। उसके पास एक हीरा
मणि मानक सुन्दर तोता था। वह एक बहेलिये के हाथ में पड़ कर
चित्तौड़ के एक ब्राह्मण के हाथ में बिक गया, जिसके पास से चित्तौड़ के
राजा रत्न सेन ने एक लाख रुपए में खरीद लिया और महल में आने पर
मानक अपनी पटरानी के पास भेज दिया। रानी के सामने एक दिन उसने
पद्मावती की प्रशंसा की तो [illegible] इच्छा से जल गई और उसने तोते को मारने
के लिए एक दासी को दे दिया। दासी ने उसे न मार कर राजा को और कह
सारी कहानी बताई। राजा तोते से पद्मावती की प्रशंसा सुन, उसके [illegible]
से पागल हो, योगी बन, १६ हजार अन्य योगी राजपूतों को साथ ले
सिंहल-द्वीप की ओर तोते के बताये मार्ग से चला। सिंहल-द्वीप में एक
शिव-मन्दिर में डेरा डाला। तोते से खबर पा पद्मावती शिव-दर्शन
के बहाने मन्दिर में आई। राजा देखकर मूर्छित हो गया।
रात को शिव मठ के बल से गढ़ में आने की उसने चेष्टा की तो पकड़ा गया
और फाँसी का दण्ड मिला। सूली पर उसके अन्य साथी योगी गढ़ पर चढ़
दौड़े। गन्धर्व सेन ने हार कर अपनी स्त्री पद्मावती का ब्याह रत्नसेन से कर
दिया और वे सब उसे लेकर चित्तौड़ आये। वहाँ एक दूर ब्राह्मण से दिल्ली
आदर अला-उद्दीन की पद्मिनी के रूप गुण की प्रशंसा सुनाई। वह बेताब हो
गया। रानी सुलभ पद्मिनी को प्राप्त करने में जब वह सफल नहीं हुआ तो
उसने चढ़ाई करना और युद्ध में सन्धि करना। निमंत्रण में शीशे में उसने
पद्मिनी का प्रतिबिम्ब [illegible] और राजा को मालूम हो गया। रत्नसेन जब
[illegible] तक आया तो उसे वह चतुरता पकड़ कर

किया है और अन्य में कावुल, बदख्शां, गुजरात, सिंहल द्वीप इत्यादि का वर्णन किया है जिससे इनके भौगोलिक ज्ञान का भी अनुमान होता है। आदर्श या काव्य सभी सूफी कवियों के समान इनकी कहानी का भी आधार आध्यात्मिक प्रेम है, जिसकी मार्मिक व्यंजना इन्होंने एक लौकिक कल्पित प्रेम कथानक के रूपक द्वारा की है। काव्य की कथा का सार निम्न लिखित है।

नैपाल का राजकुमार सुजान अपने मित्र सूवा के साथ करनगर की राजकुमारी की वर्षगांठ का उत्सव देखने गया था। चित्रशाला में राजकुमारी चित्रावली का चित्र देख कर मोहित हो गया और अपना चित्र भी वहीं टांक कर वापिस आ गया। बाद में हर दम उसकी चिन्ता में घुलने लगा। उधर चित्रावली ने भी राजकुमार के चित्र पर आसक्त हो उसकी तलाश में जोगियों के रूप में आदमी भेजे। सुजान ने अपने मित्र सूवा को गद्दी में एक अक्षय छत्र (चंदोवा) सौंप दिया और वहीं रहने लगा। संयोगवश एक जोगी से भेंट होने पर वह उसके साथ रूपनगर आता है और शिव-मंदिर में राजकुमारी से भेंट करता है। दुर्भाग्य से फिर उसका साथ छूट जाता है और वह उसके विरह की पीर में जगलों में भटकता हुआ सागर गढ़ की राजकुमारी कमलावती की फुलवारी में जा विश्राम करता है। वह उसके सौंदर्य पर आसक्त हो, जब रानी से काम नहीं बनता तो छल से योगी के रूपमात्र में उसे कैद करा देती है। इसी बीच में कमलावती को हर ले जाने के लिए एक और सोदिल नामक राजा आ जाता है, जिसे हरा कर अन्त में सुजान कमला से विवाह करता है और उसे ले स्वदेश को चल देता है। फिर चित्रावली के एक जोगी के साथ सुजान रूपनगर पहुँचता है जोगी उसे छिपा कर राजकुमारी को खबर करने जाता है तो रानी द्वार कैद करा दिया जाता है। उधर सुजान जोगी के न आने पर बागलों को खबर चित्रावली [illegible] लगता है। राजा उसे मारने को हाथी छोड़ता है पर [illegible] है। अन्त में दोनों का प्रेम पहचान राजा दोनों का विवाह कर [illegible] सुजान उसे लेकर राह में कमला का भी खेड़ा

हुआ राजा सुरथ अपनी राजधानी में लौट कर मेरे तब पुरुषार्थ का
करता है। एक उदाहरण देखिये:—

ऋतु बसन्त यौवन बन फूला, डहँ डहँ मौर कुसुम रूप भूला।
आदि कहाँ लौ संपत्ति बखाना डेढ़ दिवु दसन वर्णत उजाना॥

प्रश्न—हिन्दी में कृष्ण साहित्य का क्या महत्व या मूल्य है?

उत्तर हिन्दी में इन लोगों से पहले अधिकता नाम, योग, धर्म
...ने आदि का वर्णन होता था। किंतु इन लोगों ने मानव मन का अनूठा
भक्ति प्रेम को, लौकिक को और कल्पक अलौकिक को मानो करेना
आधार बनाया। इससे देवगति विषय का प्रेम मार्ग का भक्ति को
लाया है। कहाँ तक कहा जा सकता है कि इन्होंने भी हिंदी में भक्ति को
साहित्य बहाने में उचित योग दिया। इन्होंने शिल्प सौंदर्य वर्णनों
लौकिक अभिव्यक्तियों से हिंदी में जीवन उत्पन्न किया, उसे साहित्य
को समृद्ध अलौकिक रूप में, प्रेम रूप में स्थापित का भक्ति का मार्ग
प्रशस्त किया, जिससे संसार में सर्वत्र प्रेम ही प्रेम दिखाई दे। इसका
हिन्दी साहित्य को यह एक भारी देन है।

रामभक्ति शाखा

प्रश्न—रामभक्ति साहित्य का सार और संक्षिप्त परिचय दीजिये।

उत्तर—इस शाखा का साहित्य का उदय स्वामी रामानन्द से होता
है। ये श्री सम्प्रदाय के थे। रामानुज के द्वारा भक्ति का
प्रचार होने के उपरान्त में इसका [illegible] रामानन्द
[illegible]

अनवरत आक्रमण और अत्याचार, वीरियों के योग पाखण्ड और ... के ज्ञान वैराग्य और जगत् के प्रति मिथ्यात्व भावों के प्रचार ने समाज सर्वत्र अव्यवस्था उत्पन्न कर दी थी। मनमानी हो रही थी, ... दिनों दिन क्षीण होता जा रहा था और आक्रान्ता समाज ... रहा समाज के आदर्श लुप्त हो गये थे, विकृत रूढ़ियां रह गई थीं। ऐसे ... में भगवान् के लोक-रंजनकारी और समाज के आदर्श रूप राम की ... ही उपयुक्त हो सकती थी। स्वामी रामानन्द ने उसी को अपनाया। ने उनसे राम नाम लिया किन्तु उनके निर्गुण ब्रह्म का ध्यान किया। ... भक्त तुलसी-प्रमुख कवियों ने राम के वाल्मीकि वर्णित लौकिक रूप ... गाया और देश भाषाओं में, भक्ति में डूबकर प्रचलित छन्दों में रामचरि गाया, जिससे वह सर्वजन सुलभ हो सके। कहना नहीं होगा, अपने ... कार्य में वे पूर्ण सफल रहे।

इस काल के कवियों के सामने काव्य की दो भाषाएं चल रही अवधी और ब्रज। एक तीसरी कबीर वाली भाषा भी थी जो अभी उपयुक्त नहीं थी। अवधी में जायसी लिखित दोहा चौपाई पद्धति का ... साहित्य वर्तमान था। अवध राम की जन्मभूमि भी थी। रामभक्त कवियों ने स्वभावतः सुलभतया अवधी और उसमें वर्तमान दोहा चौपाई पद्धति को ही अपनाया। इस काल के तुलसीदास सब बातों में अनुपम थे।

प्रश्न—हिन्दी साहित्य में रामभक्ति साहित्य का क्या स्थान या मूल्य है?

उत्तर—हिन्दी के स्वर्ण काल का यह राम भक्ति और कृष्ण-भक्ति साहित्य स्वर्ण-साहित्य है, जिसमें बड़का या जिसका जोड़ का भी सा... लित और सुन्दर अन्य साहित्य हिन्दी अभी तक उत्पन्न नहीं कर सकी है। यह साहित्य वस्तुतः एक पीड़ित पददलित निराश्रय असहाय जनता की अवतार के प्रति करुण पुकार है, जो इनमें उभर उठी और विस्तृत हुई ... आज तक दूर से दूर गांवों में भी राम और कृष्ण के गान सुनने को मिलते हैं। इस ... इनमें दुखी आत्मा ... दिये जो ...

मरण संवत् १६४४–१६८० मानते हैं और कुछ आर्ज सियर्सन प्रभृत
प्रचलित किंवदन्तियों के आधार पर जन्म संवत् १५८३ मानते हैं।

गोस्वामी जी यू० पी० बांदा जिले के राजापुर गांव के
ब्राह्मण थे। मूल नक्षत्र में उत्पन्न होने के कारण माता पिता ने इनका
त्याग कर दिया था और इन्होंने बाबा नरहरिदास के साथ काशी जाकर
इनके आश्रम में बालन-पोषण और वहां वर्तमान एक श्री शेषसनातन
के आचार्य से वेद वेदाङ्ग पुराण, न्याय, दर्शन, काव्य आदि की शिक्षा
की। १५ वर्ष के अध्ययन के पश्चात् ये राजापुर लौटे और इनके पि
आत्माराम दुबे और माता हुलसी (जिनका जिक्र इनके समकालीन
ने किया है) ने एक भारद्वाज गोत्र की ब्राह्मण—कन्या से विवाह क
दिया। भावुक युवक तुलसी को अपनी पत्नी के बिना पल भ
चैन नहीं पड़ता था। उसके मातृमुग्ध जान पर एक बार आड़ मौका न मिलने
पर नदी तैर कर उसके पीछे आ पहुंचे। उसने उन्हें ताने में समझाया कि
यदि वे इसके प्रेम में इतने मतवाले न होकर कहीं भगवान् के प्रेम में इसी
विभोर होते तो इनका कल्याण हो जाता। तुलसी के बात खाली गई और वह
में वे वैरागी हो गये। उन्हों ने वहीं तपश्चरण किया। अयोध्या काशी प्रयाग
वृन्दावन इनके विशेष प्रिय स्थान रहे, जहां ठहर ठहर कर इन्होंने अपने ग्रन्थ
लिखे। अपनी परिपक्वावस्था में ये स्थायी रूप से काशी में टिक गये थे
जहां इन्हों ने १६३१ में अपना रामचरित मानस महाकाव्य लिखा। यहीं
१६८० में काशी में फैली महामारी में इनका देहान्त हुआ। प्रसिद्धि के
अनुसार इनने विक्रूट में सूरदास मिलने आये, इनके निमंत्रण पर फिर ये
श्री मथुरा आये। कहते हैं इनका हनुमान और सीता से भी साक्षात्कार हुआ था।

सिद्धान्त—तुलसी रामानन्द के मत के अनुयायी, विशिष्टाद्वैत के
प्रवर्तक तथा सगुणवाद के नाते ईश्वर द्वारा आत्म समर्पण का मोक्ष प्राप्ति
में विश्वास करने वाले भक्तवत्सल शरणागत सुदृढ़ मत में समर्थित रहने
वाले आप सगुण ब्रह्म के उपासक, रामावतार विष्णु और पुरुषोत्तम विष्णु
के अवतार के रूप में अनुकरणीय थे।

भाषा—उनके समय में दो काव्य-भाषाएँ प्रचलित थीं—अवधी और ब्रज। ज्ञानमार्गी सन्तों की भाषा का रूप स्थिर और काव्य के अनुकूल था। तुलसी ने अवधी और ब्रज दोनों में संस्कृत की मधुर कामनी समान अधिकार से दोनों में लिखा। अवधी में उन्होंने रामचरित जैसा महाकाव्य लिखा तो ब्रज में विनय पत्रिका, कृष्ण गीतावली लिखी। भाषा परिमार्जित, विषयानुरूपिणी, सरल, सुगठित और है। अपनी भाषा और कला किसी में भी तुलसीदास जी ने नहीं आने दी।

रामचरित मानस—यह उनकी सर्वश्रेष्ठ रचना है। इसमें तुलसी ज्ञान का, वैराग्य का, भक्ति का, उनके प्रेम का, दया का, महानता दीनता का, उनके जीवन के चरम निष्कर्ष का, उनके पाण्डित्य और का पूर्ण विकास है। यह वस्तुतः सार्वभौमकाव्य है, जिसका प्रभाव और काल की सीमा से परे है। यह राम के समस्त जीवन का और रससिद्ध कवीश्वर द्वारा उपस्थापित पूर्णाङ्ग चित्र है। कथानक मुख्य आधार वाल्मीकि रामायण होते हुए भी तुलसीदास ने भावना के अनुरूप उसका समास-व्यास आदि (परिवर्तन परिवर्द्धन) है। भाव, भाषा और काव्य कला की दृष्टि से यह ग्रंथ पूर्ण है। कवि प्रतिभा का विकास सर्वतोमुख है। इसके अन्दर आरती आदि दोहा चौपाई पद्धति का अपनाया है और बीच बीच में सोरठा, कवित्त, सवैया आदि का भी प्रयोग यथा स्थान विभिन्न काण्डों के अन्त में किया है, जैसा कि महाकाव्य के नियमानुसार छन्द-भेद होना चाहिये। समस्त प्रचलित काव्यरीतियों अलंकारों आदि का समुचित रूप किया है। यह वस्तुतः समस्त जीवन का सजीव पूर्ण चित्र है जो कि के लिए आदर्श है। ज्ञान-वैराग्य और योग में पड़ कर सामाजि जीवन में जब अनास्था उत्पन्न हो रही थी, भाई बहिन, पति पत्नी, पिता पुत्र, भाई भाई, माता पुत्र, राजा प्रजा, और विश्व मित्र, सब के कर्त्तव्य शून्य हो रहे थे सब के हृदय से प्रेम का स्रोत सूख चुका था, समाज जर्जर हो रहा था, उस समय रामचरित मानस ने उन्हें

का उनको रूप दिखाया और उनके सामने एक आदर्श उपस्थित किया । इस दृष्टि से रामचरित मानस का गूढ़ साहित्य, समाज देश और जाति सबके लिए अमूल्य है । इसमें सब रस [illegible] हैं, प्रकृति वर्णन [illegible] है, भाव गहरे और चित्र उज्ज्वल हैं । कविता के साथ साथ इसमें हमें तुलसी के भारतीय इतिहास का भी विभिन्न स्थलों में मधुर दर्शन होता है । लक्ष्मण-परशुराम का, अंगद-रावण और का राम-बालि सम्वाद अद्भुत है ।

विनय-पत्रिका— इसमें तुलसी ने गीतों में विभिन्न छन्दों में अपने समय की, समाज की, देश की, राष्ट्र की, धर्म की, दुर्दशा का मार्मिक और वास्तविक वर्णन किया है । अन्त में भगवान के पास अर्जी भेजी है कि सुधि लें और यह भव सागर, महामारी का क्लेश शान्त करें । इसकी भाषा संस्कृत मिश्रित शुद्ध मधुर ब्रज भाषा है ।

कृष्ण-गीतावली— रामायण के अतिरिक्त तुलसी दास जी ने कृष्ण की लीला भी गीतों पदों के रूप में, ब्रज भाषा में गाई है । कृष्ण गीतावली उनके उन्हीं पदों का संग्रह है । कहते हैं उन्हें कृष्णजी ने भी राम रूप होकर दर्शन दिये थे । ऐसी ही किम्वदन्तियों के आधार पर सूर तुलसी की चित्रकूट में भेंट होनी भी कही जाती है, जिस के निमंत्रण पर तुलसी [illegible] मथुरा आये थे ।

इनके अतिरिक्त उनके समस्त साहित्य-समुद्र का अवगाहन करना सहज नहीं । उनका साहित्य छोटे मोटे ग्रन्थों के रूप में बहुत बड़ा है । तुलसी अपने समय के हिन्दी साहित्य-जगत् के नेता थे, जो कि समय की उस समय की उनसे बड़ी आवश्यकता की पूर्ति थी । उदाहरण के लिए—

रघुकुल-रीति सदा चलि आई ।
प्राण जाहिं पर वचन न जाई ॥

[illegible] राम चरित मानस का यह प्रसिद्ध पद याद कर लीजिये ।

इनके अतिरिक्त [illegible] इस शाखा में और भी कवि हुए [illegible] तुलसी के [illegible] इनके [illegible] कोई नहीं [illegible] है । [illegible] में इनके नाम [illegible] है

स्वामी जगन्नाथ—ये जयपुर राज्य के सवाना नामक ग्राम के रहने वाले गुरुमुखी ग्रन्थ के लगभग १६३२ के लगभग वर्तमान थे। [illegible] संप्रदाय में दीक्षित होने पर इन्होंने हरि के गीत गाये। [illegible] आत्म-बोधी, राम ध्यान मंत्रावली आदि और फुटकल पद लिखे। उदाहरण—

यहो राम मुखहो सोवन, मैं कवि कन्द अन्ध नहीं कोवन।
जग भरम भरम मैं आन्यो, इन्द्री दोनि पुरान डान्यो॥

आत्माराम—ये जगन्नाथ के शिष्य और सवाना ग्राम के रहने वाले थे। इनकी गुरुमुखी की से भेंट की हुई थी। इनका काल १६४० के लगभग जगन्नाथ लिखा जाता है। इन्होंने जगन्नाथ सांप्रदाय ग्रन्थ में संग्रहीत की कविता में संक्षिप्त रूप में जीवनियां या प्रशस्तियां लिखी। इनने १७१० में अन्य ग्रन्थ लिखकर तैयार की। इनका एक उदाहरण—

जैसा आत्म निरूपण कीनो मत कोटि रामायण।
इक अक्षर इकसो अरु इन्द्रादि पखानन॥
अरु अगनत मुख वेद चतुरि कीना विस्तारी।
रामकाम रमरूप रहन अनतिनि अन चारी॥

ग्रन्थ चन्द चौहान—१७१० में रामायण नाम का ग्रन्थ लिखा जो कि राम नाम का गायक है, इस ग्रंथ के अतिरिक्त नहीं। आश्चर्य लिखने में केवल यह है कि अनन्य राम-उपासक जगन्नाथ के दल में लिखे हैं। एक उदाहरण—

जो आतम आया अरु पाया।
परमी आदि ब्रह्म की माया।
ऐसे जाना वह सुनि मन मूला।
अहा हरु जगत के फूला॥

हरिराम—इन्हें भी १७१० में संग्रहण के अनुसंधान के [illegible] लिखने के एक हस्तलेख लिखा। यह भी इस ग्रंथ के अनुसंधान में [illegible] के भक्तजन का आश्रय करते हो ये कविताएं। उदाहरण—

इन्द्रन की आई सो ए अनन्दा, मना
पूरी न कामन मन मांहि की,

बेजोड़ वर्णन किया। इनकी भक्ति की भावना सेव्य-सेवक भाव में थी किन्तु उनकी राम या गोपाल आदि की लीलाओं के वर्णन में यह भाव में बदल जाती थी। कृष्ण के विशाल जीवन के इन्हीं अनुरागमय को लेकर इन अष्ट सम्प्रदायिक कवियों ने अपने हृदय की समस्त अनुभूति साथ भाव में डुब कर काव्य लिखा है। विषय के अनुरूप ही ब्रज का भी अंग है, जो इन अष्ट कवियों की भाव-गंगा में अवगाहन कर पुनीत और परिमार्जित हो गई है। इस धारा के सर्वोत्कृष्ट सर्व-प्रमुख सूरदास हैं।

प्रश्न—कृष्ण-साहित्य का हिन्दी में क्या स्थान है?

उत्तर—कृष्ण-साहित्य का भी हिन्दी में वही महत्वपूर्ण स्थान है राम-भक्ति साहित्य का। दोनों साहित्य वस्तुतः हिन्दी के स्वर्ण काल स्वर्ण-साहित्य हैं। दोनों के स्वरूप और दृष्टिकोण में थोड़ा अन्तर अवश्य है। एक संसार की अपूर्णता से भरना चाहता है तो दूसरा आदर्श व्यवस्था दोनों ही साहित्य एकान्त स्वाभाविक सुन्दर और उच्च समाज के मन आकर्षक और आनन्दित करने की अद्भुत क्षमता से ओत प्रोत हैं। कृष्ण ने जिस आनंदवाद और प्रेममय रूप का वर्णन किया है उसमें वर्षों के अंतर में कृत्रिमता आजाने हुए भिन्न रूप आने हैं। अब माया की यह साहित्य में ऐसी अभ्यर्थना हुई कि वर्षों व युगों में उसका अन्त हो गया फिर भी इसमें साहित्य की धारा अबतक बहती आ रही है। संतों की और धारा के पद न मिलने से यह अधिकतर सख ही रहता—इस अब विभिन्नता नामावली (पदावली) का भी रहना। कृष्ण अधिक काव्य अनुरक्ति विभिन्नता मुसलमानों के भी मन पर छा कर दोनों में ओत कृष्ण की कथा-कीर्तन में सुख व ऐसे कि हिन्दू [illegible] विषय में अनुरक्त है और हिन्दी काव्य आकाश की [illegible]

प्रश्न—सूरदास [illegible] बताइये।

उत्तर—[illegible]

अग्रदेव से उनसठवें इन्हीं को स्थान दिया जाता है। ये वस्तुतः कवि और भक्त पीछे। इनकी कविता में भक्ति की अपेक्षा रसिकता अधिक। इस रसप्रवणता में आनन्द इनका शृङ्गार वर्णन कहीं कहीं भक्ति के की सीमा से बाहर निकला भी प्रतीत होता है। जैसे ये शिव और के उपासक थे और कृष्ण का वर्णन इन्होंने शृंगार के देवता होने के किया है। किन्तु, अलौकिक आलम्बन होने के कारण इनकी गणना को भक्ति कालों में ही स्थान दिया गया है। इनका काल १४ १५९० है। इनके अनन्तर विष्णु स्वामी निम्बकाचार्य आदि का वर्णन किया गया।

वल्लभाचार्य—माधव सम्प्रदाय में वल्लभाचार्य का सर्व प्रमुख है। क्योंकि विशेष रूप से कृष्ण भक्ति का प्रचार का श्रेय इन्हीं को है। इन्हीं के चलाये शिष्य-सम्प्रदाय ने कृष्ण भ चरम सीमा तक पहुँचाया था। ये १४३५—१५८० के काल में थे। तिरुमल विष्णु सम्प्रदाय के थे। इन्होंने भक्ति की नवीन, अपनी विशेषता स्थापना की और अपने मत-प्रतिपादन के लिये संस्कृत में वेदान्त सूत्र, भाष्य आदि चार ग्रन्थ लिखे। ये अपने शुद्धाद्वैत वाद के अनुसार कृष्ण सच्चिदानन्द ब्रह्म में कोई भेद न मान कर कृष्ण को ब्रह्म रूप मानते थे। जगत के व्यावहारिक रूप को सत्य का विकास मानते थे। इनके मत में जगत में नहीं किसी प्रकृति कृष्ण की माया ही शेष न किया है जिस जिस [illegible]

[illegible]

विरह का सूर ने बड़ा सूक्ष्म और गहन वर्णन किया। विषय का ऐसा उपस्थित हो जाता है। सूर की भक्ति सख्य-भाव की तो थी ही इसलिए जहाँ वे कृष्ण की बाललीला, रासलीला या प्रणय का वर्णन करते हुए वहीं वह सख्य भाव से भी आगे बढ़ जाती है, जिसमें ठठोली भी होती है, हँसी भी है और मजाक भी है और साथही तीखे ताने और व्यंग्य भी। सूरदास ने भगवान को हर तरह की सुनाई है।

इन्हीं बातों में सूर तुलसी से पृथक् हैं। तुलसी ने राम के अनुज होने रूपों का भी वर्णन किया है, किन्तु उतने विशिष्ट रूप में नहीं जितने में कि उनके अन्य कर्तव्य-पालक, मर्यादापालक, लोकरंजक रूप और दुष्टदलन रूप प्रतिपालक रूपों का। इन्होंने राम के सम्पूर्ण जीवन का उपयुक्त वर्णन किया है, किन्तु सूर ने कृष्ण के विशेषतः बाललीला, प्रेम, विरह आदि का वर्णन किया है और उसमें वे तुलसी से बढ़ गये हैं। सूर में जो सहजता आत्म-विस्मृति मिलती है वह तुलसी में नहीं। रामचरितमानस में भक्त के सामने मर्यादा इस तरह खड़ी रहती है, उसे उसका ज्ञान नहीं भूलता भक्त और भगवान् के बीच का भेद नहीं मिटता। जहाँ कहीं मिटने भी लगता है, वहाँ तुरन्त कवि ध्यान करा देता है कि श्रीजानकीनाथ पुरुषोत्तम हैं, ईश्वर हैं—रस का प्रवाह भक्ति में बदल जाता है। सूर ने स्वयं रस प्रवाह में डूब कर लिखा है, मर्यादा भी रखी है और वहाँ प्रभाव पाठक पर पड़ा भी है। भक्ति व्यंग्य रहती है। तुलसी के राम मर्यादापालक हैं। अतएव में आज इन्हें परिवर्तनशील जगत को मर्यादा के पालन करने की चिन्ता रहती है। विपत्ति में, कष्ट में, वे रोते भी हैं, पर धीरज से काम लेते हैं। ऐसा प्रतीत होता है जैसे सर्व शक्तिमान मानवीय सीमाओं में पड़ कर विवशता में कसमसाता है। तुलसी ने लौकिक पारलौकिक दोनों रूपों के अपूर्व समन्वय रूप आदर्श जीवन का चित्र उपस्थित किया है। सूर के कृष्ण ऐसे नहीं थे। वे मर्यादा का उल्लंघन भी करते हैं। बालकपन को छोड़ कर वे कभी नहीं रोये चुपचाप मुस्कराते ही रहे हैं। ऐसा लगता है जैसे सम्पूर्ण संसार का [illegible] समस्त प्रकृति उनकी चेरी बनी हुई है। [illegible] समस्त [illegible] में मग्न दिखते हैं। वे योगी भी हैं, भोगी

और भक्ति पर विवाद करती है, जिसका आधार तर्क पर अधिक आश्रित है, जिससे थोड़ी शुष्कता आ जाती है।

कुम्भन दास—ये परमानन्द के समकालीन और परम सन्तोषी महात्मा वृत्ति के थे। अकबर के बुलाने पर ये सीकरी गये किन्तु बाद में आपने। आपका यह पद प्रसिद्ध है —

सन्त को कहा सीकरी को काम।
आवत आवत पनहियाँ टूटीं बिसरि गयो हरि नाम॥

चतुर्भुज दास—ये कुम्भन दास के पुत्र और विट्ठल जी के शिष्य थे। इन्होंने द्वादश यश, हित्तु का मनोरथ और भक्ति प्रकाश नामक तीन ग्रन्थ लिखे। एक उदाहरण—

अलोदा! कहा कहौं हौं बात।
तोर सुत के करतब मोपै कहत कहे नहीं जात॥

छीत स्वामी—ये भी विट्ठल जी के शिष्य और मथुरा के पण्डा थे, जिनके पोरवज जैसे वैभवशाली यजमान थे। इनकी कविता का उदाहरण —

हे विधना तोसों अबर पसार माँगौं।
जनम जनम दीजो यहि ब्रज को बसरो॥

गोविन्द स्वामी—ये भी विट्ठल जी के शिष्य और अच्छे गायक थे। गोवर्द्धन पर्वत पर इनकी बगीचे कदम्ब-वृक्ष अब तक प्रसिद्ध हैं। उदाहरण —

प्रात समय उठि जसुमति जननी
गिरधर सुत को उबटि न्हवावै।
करि सिंगार बसन भूषन सजि
पुनि चरनन सिर नाय बनावै॥

कृष्ण दास—ये शूद्र जाति के किन्तु विट्ठल जी के परम प्रेमपात्र शिष्य थे और उनके मंदिर के प्रधान पुजारी थे। इन्होंने भक्तमाल चरित्र ग्रन्थ लिखा। इनके अन्य ग्रन्थ अनेकगीत और प्रेम तत्व निरूपण नामक प्राप्य हैं। एक उदाहरण —

[illegible]

ललित त्रिभंगि चाल पै चलिकै चितुक चारु गति डहकयो।

परमानन्द दास—ये कनौजिया ब्राह्मण और वल्लभ जी के शिष्य थे। १६०६ के लग भग हुए। इनके फुटकल पद बड़े मधुर होते थे, जिन्हें ये जो बड़ी सभाओं में सुना करते थे। इनके एक फुटकल पद का अश—

कहा करौं बैकुण्ठहि जाय ?

जहं नहिं नन्द जहां न जसोदा, नहिं जहं गोपी ग्वाल न गाय।
जहं नहिं जल जमुना को निरमल और नहिं कदमन की छांय॥
परमानन्द प्रभु चतुर ग्वालिनी ब्रज रज तजि मेरी जाय बलाय।

अष्टछाप के अतिरिक्त इस धारा में अन्य भी अनेक उच्च कोटि के कृष्ण-भक्त कवि हुए, जिनमें से कुछ एक का विशेष विवरण इस प्रकार है।

मीरा बाई—इनका काल १५७३ माना जाता है। ये उदयपुर के राणा भोजराज की पत्नी और जोध पुर बसाने वाले राव जोधा के वंश की पुत्री थीं। इनका जन्म चोकरी नामक गाव में हुआ था। विधवा होने के बाद अनेक पारिवारिक क्लेशों से तग आकर इन्होंने चित्तौड़ छोड़ दिया और भक्तवर राव दास से नाम का दीक्षा ली। ये कृष्ण की परम-भक्त उपासिका थीं।

इनका कविता में स्थान—इनके भावों का कोमलता, तन्मयता, और आत्म-समर्पण के भावना फूटा पड़ता है। भक्ति की तन्मयता में ये इतना आत्मविस्मृत हो जाती थीं कि कृष्ण के नाम-स्मरण में इनका शृंगार अनायास होने लगता है। कृष्ण की [illegible] भावना करती थीं।

इनका भाषा में [illegible] दोष [illegible] देश का विशेषता होने के कारण [illegible] में इनके कविता, माधुर्य के प्रभाव [illegible] में इनके [illegible] प्रेम या भक्ति के [illegible] —

मेरो मन राम-हि राम रटै।
राम-नाम जप लीजै प्राणी कोटिक पाप कटै।
जनम-जनम के खत जु पुराने नामहि लेत फटै।
कनक-कटोरे इमृत भरयो है नाम लेत गटै।
मीरा के प्रभु हरि अविनाशी तन मन ताहि पटै।

रसखान—१६९० के लगभग हुए। ये दिल्ली के एक पठान सरदार थे। बचपन से अत्यन्त रसिक थे। एक बनिये के लड़के पर आसक्त हो गये थे। अन्त में विट्ठल जी के शिष्य होने पर इनकी वृत्ति शान्त हुई और लौकिक प्रेम इनका आध्यात्मिक प्रेम में परिणत हो कृष्ण की भक्ति इनकी ही उदात्त गति से बढ़ा। ये मुसलमान होते हुए भी कृष्ण के सगुण रूप के अनन्य उपासक थे। भक्ति की यह गहनता इनकी कविता में सर्वत्र व्याप्त है। इन्होंने ब्रज भाषा में अधिकतर सवैये या कवित्त लिखे, जो अनुप्रास में अत्यन्त प्रसिद्ध हैं।

एक उदाहरण—

मानुष हौं तो वही रसखान बसौं संग गोकुल गाँव के ग्वारन।
जो पशु हौं तो कहा बस मेरो, चरौं नित नंद की धेनु मँझारन॥

हित हरिवंश—ये राधावल्लभ सम्प्रदाय के प्रवर्तक थे और मथुरा से उत्तर दिशा में स्थित बाद ग्राम में रहते थे। इनका जन्म १५२५ में मथुरा के अन्तर्गत बाद ग्राम में सम्भ्रान्त परिवार में हुआ था। इनका संस्कृत, साम्प्रदायिक सिद्धि और भाषा में हित चौरासी नामक पुस्तक प्राप्त होती है। इनका भाषा ब्रज है। इन्होंने कुछ संस्कृत श्लोक भी लिखे हैं।

हरिदास—इनकी कविता सम्पूर्ण [illegible]

[illegible]

[illegible]

तब मन प्राण निहाँ छिन हारि, भली बुरी कुछ दै न बिचारो,
ऐसो प्रेम उजागि है अबही दिन द्वय बात बनैगी तुम्हारी ॥

दरबारी साहित्य

प्रश्न—मुगल सम्राट् अकबर ने हिन्दी साहित्य के अभ्युत्थान में योग दिया ? वर्णन कीजिये ।

उत्तर—जब से हिन्दी की अवतारणा साहित्य में हुई अर्थात् बोल चाल से लेकर, अकबर के दरबार में बीरबल कुछ मास लेकर का सम्मिलित किया। अतएव भारत के गत डेढ़ हजार साल के इतिहास में अकबर-काल, अकबरी, तथा दरबार और कला साहित्य-संसार और कला सब को दृष्टि रखकर काल माना जाता है। अब से पहिले अरबिक और जिन भाषाओं भाषाओं का बराबर आना है सब ब्रोक-वर्णित है, इसका उपयोग परिवर्तन समाज का बदलना हुई सभ्यता और अभ्यता के साथ होता रहा। यह भाषा मुसलमानों के आने से बहुत अधिक सुधार हो है हो किंतु इसका प्रयोग बोलचाल है। यह भाषा बोलचाल महान के दरबार होता बनाने के लिए [illegible] और अन्य [illegible] के दरबार में आदर बन रहा था।

[illegible]

हंस आरसर भज्यो चकक चकवी न मिलै अति ।
बहु सुंदरि पतिनी पुरुष न चहैं, न करैं रति ॥
कलमलत शेष कषि मंग मन, अमित तेज रवि रथ लाग्यो ।
त्रासत त्रास धैरत भुवन जबहिं क्रोध करि मंग बरग्यो ॥

सेनापति—आपका जन्म १६४६ में अनूप शहर में एक कान्यकुब्ज ब्राह्मण परिवार में हुआ था। आप बड़े कुशल और भावुक कवि थे। आप की भाषा और और परिष्कृत है और भाषा ललित और सुव्यवस्थित, जिसमें स्थान२ पर सुन्दर अलंकार आदि का अच्छा समावेश है। आप का प्रकृति-दर्शन विशेषतः बहुत वर्णन अत्यन्त सुन्दर है। उदाहरण—

पूरब दो लखि नेह लाली बरनि पै
उदालनि के लाल बिलास दरसन हैं।
लखनि अरनि जा मुखनि की
छाह दो दरनि पंथी पंछी बिरमत हैं। आदि

नरहरि—इनकी कविता का समय लगभग सोलह सौ बहत्तर के इर्द-गिर्द अनुमानित की गई। इन्होंने 'रामायण' अथवा 'रामचरित' तथा 'कवित्व-रीति' आदि तीन ग्रन्थ लिखे थे। इनका जन्म १६६६ में और मृत्यु १६६० में हुआ था। कहते हैं, इनके लिखे ग्रन्थों को सुनकर तुलसीदास ने काशी के पण्डितों से इनका परिचय करा दिया था।

कवित्व सिंधु अवगाहि करि काढ़ि लये बहु ।
रस रामायन सिंधु करहि तुलसादि दीन दीह ॥
कहत नरहरि सिंधु करहि मंथन कवीस कारहि ।
सिंधुहि मथ्यो न देहि बहुत दुरबासन कविदरहि ॥
बर कवित्व कारहि बहुरा कुंडी सिंधुहि दीनो बार ।
कवित्व कौन कवि करि सकहि नरहरि दुतु बल बहु बार ।

कालदत्त मिश्र—संवत् १६६६ लगभग के इनके ग्रन्थों की खोज में लगे हुए विद्वानों को इनके ग्रन्थों की प्रतियों का पता लगाने में सफलता मिली है। इनके ग्रन्थों में 'रसार्णव' तथा 'शिवायन' प्रमुख हैं। इनके ग्रन्थों में से कुछ

दानी थे, अतः अपने पास विशेष संग्रह नहीं रखते थे। परिणाम स्वरूप इ अन्तिम सुमीवत के दिनों में बड़ा कष्ट उठाया। इनके सब पुत्रों में कोई जीवित नहीं रहा था। १६८२ में इन्होंने शरीर छोड़ा।

रहीम अकबर के नवरत्नों में से एक थे। ये बड़े उदार प्रेमी, दा ज्ञानी, दानी, नीतिज्ञ, कुशल शासक योद्धा थे। इनके साथ ही ये फारसी संस्कृत हिन्दी आदि के प्रकाण्ड पण्डित थे। उनके इन सारे और विशेषताओं का हमें उनके साहित्य में पूर्ण दर्शन होता है। उ साहित्य इन उपर्युक्त तीनों भाषाओं में मिलता है। फारसी में उ बाबर चरित और कविताओं का संग्रह लिखे, संस्कृत में खेट कौतुक ज्योतिष ग्रन्थ लिखा और हिंदी में रहीम सत सई नामक सात सौ और सोरठों का संग्रह, बरवै छन्द, नायिका भेद, मदनाष्टक, रास पंचा श्रृंगार-सोरठा आदि पुस्तकें लिखी। इनके श्रृंगार, नीति, कृष्ण भ पद बड़े सुलझे हुए हैं। इनका तुलसी सार सोरठा पद व्यवहारमें हु हि दी के अवधी और ब्रज दोनों रूपों पर आपका समान अधिकार था

एक उदाहरण लीजिये

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible] आदि।

नाम—ये अकबर के दरबारी कवियों में एक प्रमुख स्थान रखते थे। इ के भाट थे। नाम बड़ा अधिक मिलता है। इन्होंने चार विषयों पर ग्रन्थ लिखा है। उक्ति वैचित्र्य कविता। इनका विरुद था। जैसी ही वि उक्ति से इन्होंने किसी राजा या नवाब को नाराज कर दिया था जिसने इ छाया के पास्तल कुचलवा दिया था। रहीमने इनके द्वारा लिखित अ प्रशंसित श्लोक पर, कहते हैं [illegible] रुपया दिया था।

उदाहरणार्थ यहां श्लोक लीजिये —

चकित भयउ रहि गयो गगन नाह अरु कमल वन।
अंदकन मान नहि लख, नव नहा बहुत पवन घनघन॥

[illegible] कुछ उपलब्ध विवरण आपके हैं— जिस परिपाटी को अपने [illegible] कवियों ने अपनाया।

नरोत्तमदास—ये सीतापुर के बाड़ी नाम के जिलाधी [illegible] थे। इनके गुरुमाधवसिंह का जिस सबसे अधिक प्रसिद्ध है—

सीस पगा न झगा तन में, प्रभु जाने को आहि बसी केहि ग्रामा।
धोती फटी सी लटी दुपटी अरु पाँव उपानह को नहिं सामा॥
आदि [illegible]

बनारसीदास—जन्म सं० १६४३ में जौनपुर में हुआ। आप [illegible] जौहरी थे। जीवन में शृंगार की कविता लिखी थी पर बाद में [illegible] और ज्ञान, नीति, धर्म आदि पर लिखने लगे। इन्होंने बनारसी विलास, नाटक समयसार, मोक्षपदी, अर्धकथानक आदि कई ग्रंथ लिखे।

प्रश्न—इन दोनों के प्रमाण में उपलब्ध होने वाले इस अवधी साहित्य का हिन्दी में क्या स्थान है?

उत्तर—अकबर काल का यह साहित्य वस्तुतः रीति-काल का रूप था। इसी के आधार पर आगे चल कर रीति ग्रन्थों की परिपाटी पड़ी। भक्ति की प्रेम की भावना यहाँ लौकिक शृंगार में बदल गई। राधा कृष्ण के नखशिख के साथ साथ सीताराम आदि के नखशिख लिखे जाने लगे और कवित्तों के साथ साथ कवित्तों रीति और गुप्त बातों पर भी [illegible] करने का मार्ग इसी काल में बन गया था। यहाँ सारांश वस्तुतः आगे काल में रीति ग्रन्थों और नायिका व नखशिख तथा अन्य [illegible] विकसित हुआ। यह [illegible] भक्ति काल [illegible]—काल के

में आकर आध्यात्मिकता या भक्ति का काम प्रायः समाप्त हो चुका । केवल उनका नाम मात्र का व्यवहार रह गया था । राधा कृष्ण का जब वर्णन होता था, उनकी रास का, यमुना तीर का और संयोग वियोग भी जिक्र था । पर अब इस सारे वर्णन का आधार शुद्ध सात्विक भक्ति नहीं था, प्रत्युत सांसारिक विषय लोलुपता था । राज दरबार में राजा लोगों को खुश करके उनसे इनाम पाने के लोभ में कवि लोग [illegible] कृष्ण का नाम लेकर उनकी ओट में शृंगार का वीभत्स रसाभास [illegible] तक का अश्लील वर्णन करने तक में नहीं चूकते थे । आगे इतना भी [illegible] गया । राधाकृष्ण का नाम कभी भूले भटके कोई कवि ले लेता था नहीं [illegible] साधारण लौकिक नायक नायिका के ही नख-शिख आदि अंगों के सौन्[illegible] का वर्णन मात्र रह गया था । नायिका के अंगों का कामोत्तेजक वर्णन कर [illegible] पर हाथ रखकर हाय हाय करना ही कवि का पुरुषार्थ रह गया था । नायिका [illegible] अंगों का वर्णन यद्यपि पहिले भी होता था, किन्तु अब आकर नख-शि[ख] वर्णन रस का आलम्बन रूप न रहकर वर्णन का एक स्वतन्त्र विषय [illegible] था । आंख, नाक, कान, मुंह, अधर आदि पर अपना समस्त कवित्व समा[illegible] कर कवि अपने को कृत-कृत्य समझता था । इस नख शिख वर्णन की [illegible] पाटी का भी श्रीगणेश अकबर काल में बलभद्र मिश्र से हो जाता है । इसी न[illegible] शिख वर्णन वाली श्रेणी के अतिरिक्त एक और कवियों की श्रेणी थी जिन्हें हम आचार्य और कवि दोनों कह सकते हैं । वे लोग संस्कृत ग्रन्थों के आधार पर हिन्दी पद्यों में रस रीति अलंकार आदि के ग्रन्थ लिखते थे उनके (रसादि के) लक्षण लिखकर उनके उदाहरण के रूप में फिर आप कविता करके उसमें जोड़ते थे । प्रधान किसी रस का लक्षण लिखा और फिर [illegible] उसके उदाहरण बनाकर [illegible] परिपाटी [illegible] लोगों [illegible] आचार्य [illegible] कविता [illegible] [illegible] कि उनको [illegible] इसमें [illegible] [illegible]

प्रश्न—रीति-ग्रन्थकारों में मुख्य २ का समुचित परिचय दो।

आचार्य केशवदास—आचार्य कोटि के कवियों में आचार्य केशव पहिले आते हैं। इनका काल १६१२–१६७४ माना जाता है। ये निवासी और ओरछा नरेश इन्द्रजीत के आश्रित थे।

केशवदास संस्कृत के उच्चकोटि के विद्वान् थे। अतएव रसिकता [illegible] संस्कृत की परिपाटी पर काव्य के उपादानों अलंकार आदि का विवेचन [illegible] स्वाभाविक गुण थे। संस्कृत के आचार्यों में भी वे दण्डी और रुद्रट अनुयायी थे और अलंकार को ही काव्य का सर्वस्वभूत आत्मा मानते इनके कवि प्रिया, रसिक-प्रिया आदि अलंकार ग्रन्थ और रामचन्द्रिका [illegible] काव्य तीन ग्रन्थ मिलते हैं।

आप वस्तुत: आचार्य थे, कवि पीछे थे। आपने रस अलंकार आदि सर्वांगपूर्ण वर्णन किया और उसके उदाहरण रूप कविता लिखी। इनके अनुसार पर ही फिर आने के आचार्यों ने ग्रन्थ रचना की। कवि की दृष्टि से इनकी कविता साधारण कोटि की है। उसमें भावनाएं, उनकी गहनता और उनकी अनुभूति अल्पतम है। भावों में अस्वाभाविकता, [illegible] में मधुरता कम [illegible] कृत्रिमता और अनुचितता आदि आ गई हैं। [illegible] इनकी कविता [illegible] का दृष्टान्त बतलाया है [illegible]

प्रश्न—रीति-ग्रन्थकारों में मुख्य २ का समुचित परिचय दो।

आचार्य केशवदास—आचार्य कोटि के कवियों में आचार्य केशव [illegible] पहिले आते हैं। इनका काल १६१२–१६७४ माना जाता है। ये [illegible] निवासी और ओड़छा नरेश इन्द्रजीत के आश्रित थे।

केशवदास संस्कृत के उच्चकोटि के विद्वान् थे। अतएव रसिकता संस्कृत की परिपाटी पर काव्य के उपादानों अलंकार आदि का विवेचन स्वाभाविक गुण थे। संस्कृत के लक्षणकारों में भी वे दण्डी और रुय्यक अनुयायी थे और अलंकार को ही काव्य का सर्वस्वभूत आत्मा मानते इनके कवि प्रिया, रसिक-प्रिया आदि अलंकार ग्रन्थ और रामचन्द्रिका काव्य तीन ग्रन्थ मिलते हैं।

आप वस्तुतः आचार्य थे, कवि पीछे थे। आपने रस अलंकार आदि [illegible] सर्वप्रथम वर्णन किया और उनके उदाहरण रूप कविता लिखी। इनके अनुसरण पर भी फिर काल के आचार्यों ने ग्रन्थ रचना की। कवि[illegible] की दृष्टि से इनकी कविता साधारण कोटि की है। उसमें भावों [illegible] गहनता और उसकी अनुभूति अत्यल्प है। भावों में अस्वाभाविकता, [illegible] में [illegible] कृत्रिमता और अनुचितता आदि आ गई है। [illegible] [illegible] चमत्कार की दृष्टि से इनकी कविता [illegible] है। [illegible] भिन्न भिन्न अलंकारों को इन्होंने अपनाया [illegible] काव्य [illegible] भाव का अभाव [illegible] है। [illegible] आलंकारिक [illegible] वर्णन किया है। [illegible] [illegible] किन्तु इसलिए [illegible] [illegible] इनका [illegible] काव्य [illegible] [illegible] कवि [illegible] [illegible] हुआ। इनकी कविता में [illegible]

ग्रन्थ, छन्दसार नामक पिंगल-ग्रन्थ तथा मतिराम सतसई नामक एक [illegible] सौ दोहों का संग्रह ग्रन्थ लिखे।

इनकी कविता में आचार्यत्व और कवित्व दोनों में कवित्व की मात्रा अधिक है। इनकी रसात्मकता और भाव प्रवणता पर्याप्त है, जिसमें अलंकार आदि का समुचित सन्निवेश है। भाषा ब्रज है।

एक उदाहरण—

कुन्दन को रंग फीको लगै झलकै अति अंगनि चारु गोराई।
आनिक में अलसानि चितौनी में मंजु विलासन की सरसाई॥
को बिनु मोल बिकात नहीं मतिराम लहै मुसकानि—मिठाई।
ज्यों ज्यों निहारिये नेरे ह्वै नैननि त्यों त्यों खरी निकरैसी निकाई॥

देव—इनका काल १७३०—१८२७ माना जाता है। ये इटावा रहने वाले और सनाढ्य ब्राह्मण थे। ये बचपन से कवि थे और सोलह की अवस्था में आलमशाह की प्रशंसा में कविता बनाई थी। किन्तु इन्हें किसी राजा का आश्रय नहीं मिला था और अधिकतर जीवन इनका देश-देशान्तर में घूमने में ही बीता था।

इन्होंने ७२ ग्रन्थ लिखे बताये जाते हैं जो समस्त नहीं मिलते। जो मिलते हैं उनमें काव्य रसायन, रसविलास, सुखसागर आदि अनेक ग्रन्थ और देवमाया प्रपंच, जातिविलास, प्रेमचन्द्रिका, भावविलास, अष्टयामदीपिका, कुशलविलास आदि काव्य ग्रन्थ हैं। इनमें भावविलास नामक ग्रन्थ सरस है।

इस आचार्यत्व की दृष्टि से केशव से कुछ ही कम उतरते हैं। परिमाण में [illegible] कविता परिमाण में ही विषयों और वर्णनों की दृष्टि से भी [illegible] विस्तृत है। ये शृंगार के प्रसिद्ध कवि थे। इन्होंने भावि[illegible] किया है, जिसमें विभिन्न देशों की अनेक अवस्थाओं [illegible] सुन्दर वर्णन किया है। इनकी कविता चुनी हुई सुन्दरी [illegible] आपने शृंगार के अतिरिक्त अन्य रसों पर भी लिखा है [illegible] आपकी भाषा ब्रज है, जिस पर [illegible] का प्रभाव है। भाव की विस्तृत होने के कारण इनकी भाषा में

रचनाओं के उन्होंने कायम कुछ स्वतंत्र प्रणाली में भी जिसे लिखने का संबंध हिन्दी भाषा के साथ से सम्बन्धित है। इनकी एकमात्र सुरक्षित कृति शिवराज भूषण को प्रसिद्धि है जिसमें उनके १० छन्दों का संग्रह सुरक्षित इसके आधार से प्राप्त होता है। इस इसके अतिरिक्त उनका और कोई साहित्य नहीं मिलता।

समर्थ-रसाल के प्रसिद्ध भूषण ने साहित्य में वीरता का प्रसाद बरसाया था। उनका स्वभाव-सिद्ध रस वही था। जैसे ही वीर देश-भक्त शिवाजी और छत्रसाल जैसे उन्हें अपने वर्णन के नायक मिल गये थे। सोने में सुगन्ध का योग हो गया था। उन्होंने अपने नायकों पर हृदयखोल के मुक्त हस्त उनकी प्रशंसा की है, जिसके कि वे अधिकारी थे। उनके वर्णनों में अतिशयोक्ति कोष में उन्होंने अत्युक्ति का अतिशयोक्ति से काम लिया है, पर उनका आधार खुशामद या कल्पनाएँ नहीं था, बल्कि वस्तुतः उनके प्रति उनका आन्तरिक स्वाभाविक प्रेम और श्रद्धा ही थी। उन्होंने जो कुछ कहा वह वस्तुतः स्वान्तः प्रेरणा से कहा, इनाम पाने के लालच से नहीं। अधिकांश समकालीन हिन्दू जनता के शिवाजी के प्रति ऐसे ही अद्भुत और अलौकिकता के भाव थे, जैसे कि भूषण ने अलंकार की उक्ति कुछ ऐसा कहे। शिवाजी और भूषण के भाव और विचार आपस में एक थे। इसी लिए कहा जाता है कि एक ही देश-भक्त वीर आत्मा ने कार्य क्षेत्र में शिवाजी के रूप में, और साहित्य क्षेत्र में भूषण के रूप में अपना विकास पाया था। यह बात असत्य नहीं।

भूषण के वर्णन विशद और सजीव होते हैं। उन्होंने शिवाजी की चढ़ाई, आक्रमण, युद्ध और शौर्य-कृत्यों के, शत्रुओं के हमलों का भयंकर का, बातावरण का अनुपम वर्णन किया है। अलंकारों में उपमा, रूपक, अत्युक्ति, अतिशयोक्ति श्लेष, उत्प्रेक्षा, विभावना आदि शब्दालंकारों में यमक, वीप्सा, अनुप्रास, आदि का सुन्दर प्रयोग किया है। छन्द वीर रस के उपयुक्त कवित्त, सवैया, छप्पय, दण्डक आदि का उपयोग किया है।

भूषण की भाषा ब्रज है, उसमें बुन्देलखंडी अरबी फारसी संस्कृत आदि के शब्दों का मिश्रण है। उनके बारे में एक मुख्य बात यह कही जाती

इन्होंने काव्य के अंगों—रस, रीति, अलंकार, दोष रस शक्तियों आदि समस्त विषयों पर विस्तारपूर्वक विवेचन किया है। छन्द और भाषा के विषय में भी आपने ग्रन्थ रचना की है। इनके निर्णय नामक ग्रन्थ में शृंगार का विवेचन बड़ा सुन्दर माना जाता है। इसके अतिरिक्त इनके छन्द प्रकाश, काव्य-निर्णय, रस सारांश, [illegible] रिंगार, शब्दार्थ रत्ने काव्याभरण प्रकाश, अमर प्रकाश आदि ग्रन्थ लिखे हैं।

अपनी कविता में ये अपना नाम 'दास' लिखा करते थे। यही नाम साहित्य में प्रसिद्ध भी है।

भाषा आपकी शुद्ध परिमार्जित संस्कृत-गर्भित व्रज भाषा है। जैसे—

कवि के निवास पैठि आनि मुंह मुंदन में,
लोकन को देखि हास आनन्द बगति है।
दौरि दौरि जहां तहां लाज करि डारति है,
अंक आनि कंठ लगिबे को उमगति है॥
चमक झमकवारी दमक दमक वारी,
रमक तमक वारी आदिर जगति है।
दास असि राखरे की रन में बरन में,
निलज बनिता सी होरि सेजन लगति है॥

पद्माकर भट्ट—अपने समय के ये सबसे प्रसिद्ध और महायशस्वी कवि हैं। इन्होंने राजाओं की प्रशस्तियों में और प्रचलित परिपाटी पर अनेक ग्रन्थ लिखने के साथ ही अन्य स्वतन्त्र विषयों पर भी कविता की है, जिसमें अधिकांश शृंगार वर्णन अपने काल में आदर्श माना जाता था। इनकी अलंकार गुण रीति आदि की योजना, प्रकृति वर्णन नायिका वर्णन, वर्णन आदि सजीव और गहरी अनुभूति को लिए हुए हैं। ऐसा ही भाषा पर भी अधिकार है जो पद्माकर जैसे कुशल और समर्थ कलाकार हाथों में पड़ कर, लिपटानुप्रास या स्वानुप्रास कोमल कठोर आदि कवि के हृदय की भावना के [illegible] स्वानुकूल बाद में नाचती, मचलती, अकड़ती और गरजती हुई दिखाई देती है।

ये चरखारी के राजा विक्रमसाहि के आश्रित थे। इनका काल १८८०-१९०० माना जाता है।

उदाहरण—

तरुने तरिवा चहुँ ओरन से घिरि छाई घमोरन की झरी।
अरमाने महा गिरिशृंगन पै गन मंडु मयूरन के कदरौं॥
झुकी करनी बरनी न परै मगहर गुमानन यौं गहरौं।
घन से घन अपहच में गहरैं घहरैं कहूँ जाय कहूँ ठहरैं॥

प्रश्न—इस परिपाटी (रीति ग्रन्थों की) में हुए अन्य कवियों का संक्षेपतः परिचय दो।

उत्तर—इस काल में अनेक ग्रन्थों की परिपाटी में कविता करने वाले जो अन्य कवि हुए उनका संक्षिप्त परिचय निम्न लिखित है। विशेष के लिए अन्य ग्रन्थ देखने चाहियें।

कुलपति मिश्र—इनका रचना काल १७१०-१७४५, आप चौबे ब्राह्मण, निवास आगरा और इनके ग्रन्थ रस-रहस्य, युक्ति तरंगिणी, नख शिख, संग्रहसार गुण, रस रहस्य आदि हैं। रस-रहस्य सर्वश्रेष्ठ है। ये उच्चकोटि के विद्वान् आचार्य और कुशल समर्थ काव्यकार थे। उदाहरण —

देखिय कुंज बनी छवि पुंज रहे अलि गुंजर या सुख मानै।
नैन रिझावन हिये बन माह रिझोकन रूप सुधा अति लोनै॥ आदि २।

श्रीपति—इनका समय लगभग १७००, आप काश्यप गोत्रीय ब्राह्मण, निवास स्थान काल्पी, और ग्रन्थ, काव्य सरोज, कवि कल्पद्रुम, रस सागर, अनुप्रास विनोद, विक्रम विलास, सरोज कलिका, अलंकार गंगा आदि विदित हैं। ये अच्छे विद्वान् आचार्य और प्रवीण कवि माने जाते हैं। उदाहरण —

जल भरे झूमैं मानो भूमैं परसत आय,
दमकू दिसान घूमैं दामिनी लचत जात।
पूरिबार धूमर से धूम से धुवार धार
धुरवान धारे धावैं छवि सों छए छए॥ आदि आदि।

सुखदेव मिश्र—काल १७२० १७७०, [illegible] (बरहा) [illegible]

आदि का ग्राम था, जिसमें, जहाँ में इन्होंने पद्य लिखे हैं। इन्होंने कविता अपने समय में अधिक और बाद् काव्य-पद्धति के आधार लिखी है, जिससे रस का आर में कभी का इनिमना का नहीं है।

मोहन के सोहन कीजेबो न आवत रही।
कोहू न रही न बल चले [illegible] करत की।
आवत अवध तर सरित सिमट सब
बंक को न बंक को न डहन गरद को॥ आदि।

प्रश्न—इस काल में हुए सुवक्तवाद कवियों का संक्षेप में परिचय दें
उत्तर—इस काल में दो सौ सुवक्तवाद कवि हुए हैं जिन्होंने अपने में फुटकर कविता और लक्षणग्रन्थ लिखे हैं। इनका परिचय निम्न है।

अजो मुहिब खाँ—इनका काल १७८०, निवास आगरा है। ये अरबाज बाहुली नामक हास्य का काव्य लिखा। उदाहरण—

बाहन पै गयो देखि बदन में रहे धूरि
लोचन पै गयो से पराग ढोर पाई है।
गजन पै गयो भूल डारत हैं लोन पर
बेहन पै गयो काहू हारू न बनाई है।
जब हहराय हम हरी के निकट गये
हरि मोसों कहि बेरी मति भूल जाई है॥
कोऊ न उपाव अरबाज अति होसै, सुन
खाद के बगर खटमल की दुहाई है॥

रसलीन—इनका काल १७४४, और नाम सैयद गुलाम नबी, इन्होंने अंगदर्पण और रस प्रबोध नामक दो रीति ग्रन्थ लिखे। ये काव्य कलापक्ष में अधिक विश्वास करते थे—भाषा के ऊपर पर अधिक अलंकार का अधिक उपयोग किया है। उदाहरण—

तुव पगतल सुदुता लिख कवि अनवा पकराहिं।
मन में आवत मास वा, मल दुख वा जाहि॥ आदि

आलम—इनका रचना काल [illegible] इनके नाम

गोविन्दपुरा था। इनके एक भाई और बहिन थी। इनकी माता की मृत्यु
बचपन में इनके पिता इन्हें १२ वर्ष की ही अवस्था में लेकर ओरछा
दरबार में चले गये जहां बिहारी का काव्यांग वेदांग और इनकी संगीत
प्रवीणराय से अच्छा परिचय हुआ। ओरछा के समीप ही कुंडो गांव
महात्मा नरहरि रहते थे। इनके पिता ने इन्हें नरहरि दास और केशवदास
पास पढ़ने भेजा दिया। इनका नाम बिहारीदास नरहरि को से रखा
इनका विवाह मथुरा की एक चौबे पुत्री से हुआ था। बिहारी बाल से
बहुत रसिक और चतुर थे। इस पर इन्हें केशव और प्रवीणराय से
अत्यन्त रसिक चमत्कारों का रस सिक्त हुआ था जिससे इनके रस ग्रहण
और भी वृद्धि हुई। इसी चातुरता के कारण ये अपनी ही पर अपनी
अपनी ससुराल मथुरा में ही रहने लगे थे। एक बार ये जयसिंहजी को देखने
बादशाह शाहजहां से भी मिले, जो इन्हें अपने साथ आगरे ले आया
इन्होंने वहां रहते हुए कवियों का सत्कार किया। वहां से ये आमेर
वहां महाराजा जयसिंह अपनी नवविवाहित स्वसुरपुत्री के
पास में मस्त हो राज काज भूले हुए थे। बिहारी ने उन्हें यह दोहा लि
भेजा कि.—

नहिं पराग नहिं मधुर मधु नहिं विकास इहि काल।
अलि कलि ही सों बिंध्यो आगे कवन हवाल॥

महाराजा पर यह निशाना इतना ठीक बैठा कि वे रंग महल से
निकल आये और राज काज करने लगे। तब से इनकी कविता पर वे
मुग्ध हुए कि उन्होंने इन्हें अपने पास ही रखा। कहते हैं इनके एक
दोहे पर उन्होंने एक एक मोहर इनाम में दी और उनकी संख्या में इन्हें
छोटा कवि पद्माकर नाम के स्थान किया था। ये महाराजा जयसिंह के
मरने के बाद भी आगरे में, जिसको उन्होंने किया है। अपनी
में पूर्व ये इलाहाबाद जाकर [illegible] रहे। कि
इस समय का बिल्कुल कोई भी [illegible]

बिहारी का [illegible] प्रेम [illegible] समय, प्राप्य
विषय सार सार है। बिहारी [illegible] कुछ [illegible]

बिहारी ने अपने दोहों में नायक, नायिका, उनके [illegible] विभिन्न स्वरूप और दशाएं, ऋतु और ऐसे ही शृंगार सहयोगी विषयों [illegible] बड़ी सूक्ष्म, घुमती हुई, रसमयी उक्तियां कही हैं और इन दोहों में ही। इस बीस तीस ही उच्च कोटि के नहीं हैं अयुत सब के सब एक से एक बढ़ कर हैं। स्व० आचार्य रामसिंह ने सतसई के बारे में कहा था कि "इस ग्रंथ के दोहरी को निकाल दीजिये उत्तरोत्तर निकलती जायेगी।" बिहारी ने संस्कृत, हिन्दी और फारसी के साहित्य का अभ्यास किया था, इसका प्रभाव उनकी अपनाई काव्य शैलियों या वर्णन की रीतियों से मिलता है। उनकी सूक्ष्मता, बारीक बीनी और अतिशयोक्ति पर स्पष्ट ही फारसी का प्रभाव पड़ा। काव्य के इसी प्रभाव में आकर उन्होंने एक दो दोहों में शृङ्गार में विभत्स वर्णन भी कर दिया। उत्प्रेक्षा, उपमा, अतिशयोक्ति, रूपक, विरोधाभासालंकार, अप्रस्तुत प्रशंसा आदि मुख्य २ अलंकारों का उनका प्रयोग बहुत है। सारांश में बिहारी की कविता अपने विकास की चरम सीमा को पहुंच गई है जो अपनी उपमा नहीं रखती।

इसके इन्हीं गुणों के कारण आज तक बिहारी सतसई पर कोटि कवियों ने जितने ग्रन्थ टीका टिप्पणी आदि लिखे उतने किसी काव्य पर नहीं

उदाहरण —

कब इस आत्मकथा की पुरखी परी लुकाय।
सौंह करै, भौंहनि हंसै, दैन कहै नटि जाय॥

गुरु गोविन्दसिंह—इनका समय १६६६-१७६७ है। इनकी प्रसिद्धि वस्तुतः इनकी कवि के रूप में नहीं है जितनी कि एक पंथ के धार्मिक गुरु राजनैतिक नेता और संस्थापक के रूप में। ये सिखों के दशवें गुरु थे और इनकी वाणी [illegible] ग्रन्थ साहब में संग्रहीत है। इन्होंने खालसा, बोलबाला, भक्ति के और [illegible] का नारा दिया है [illegible] निर्गुण की उपासना का [illegible] को अपने और [illegible] इन्होंने [illegible] की रचना की थी। [illegible]

वस्तु-स्थिति का प्रवाहक्रम वर्णन करने में वे विशेष दक्ष थे। उदाहरण—

अमिमतु चाह मृदग परहारे संमुख जेहि बाजी तेहि मारे॥ आदि

युद्ध—इनकी नीति के सात सौ दोहों वाली पुस्तक—सतसई प्राप्त है। ये मेड़ते के रहने वाले और हरिवंशपुर के महाराज रायसिंह के गुरु थे। इनका काल १७६१ है।

महाराज विश्वनाथसिंह—ये रीवां के महाराज थे, जो १७८८ से १८१७ के काल में वर्तमान थे। ये बड़े विद्या प्रेमी और गुणी जनों का सत्कार करने वाले थे। इनके रचे ३२ ग्रन्थ बताये जाते हैं। इनके अतिरिक्त इन्होंने ब्रज भाषा में सर्व प्रथम आनन्द रघुनन्दन नाम का नाटक भी लिखा था। ये वस्तुतः सफल कवि थे।

जोधराज—इन्होंने रणथम्भौर के हम्मीरदेव के चरित और उनके अलाउद्दीन के साथ हुए युद्धों का हम्मीर रासो नामक ग्रन्थ में बड़ी ओजस्वी भाषा में वर्णन किया है। इतिहास की घटनाओं को यद्यपि इन्होंने ज्यों का त्यों ही रखा है, तो भी प्रसंगवश अवान्तर कथाओं की कल्पना कर ली है। इनका काल १७२० माना जाता है। उदाहरण—

जीवन भर न संजोग जग कौन मिटावै ताहि।
जो जनमै संसार में अमर रहै नहीं आहि॥

गिरधर कविराय—ये १७७० में वर्तमान थे। इनकी लिखी हुई लिखी गाथों में अत्यन्त प्रसिद्ध हैं। इनके अतिरिक्त इनका और अधिक पता नहीं।

हमीरदान बन्दी—इनका काल १७६६ था और ये पन्ना नरेश अमानसिंह के दरबारी कवि थे। ये स्वयं सम्प्रदाय से दीक्षित थे, अतएव इनकी कविता में प्रेम का आदर्श भी है। इनकी रचना परिमार्जित कोमल कान्त सुगठित वाणी भाव और रसमय है। उदाहरण—

पर मुकरवार चरवाह गाय हमारी लीजो।
गाय न कहूँ तुरन को वाणी सौंपि सुरप के दीजो॥ आदि

बेताल—इन्होंने विक्रमादित्य का सम्बोधन करके कुण्डलियाँ लिखी हैं। ये जाति के बन्दी जन थे और १७२४ में जन्म थे।

पर समान अधिकार था। उदाहरण—

चल चकई तेहि सर विषे जहँ नहि रैनि वियोह।
रहत एक रस दिवस ही सुहृद हंस सन्दोह॥

चन्द्रशेखर—काल १८२२—१८३२, स्थान बिलहा कलहपुर मुधा-नगराबाद और जाति बाजपेयी ब्राह्मण थे। ये अन्तिम दिनों में शाहाबाद नरेश नरेन्द्रसिंह के आश्रित रहे जिनके कहने पर इन्होंने हम्मीर हठ नामक वीर काव्य की बड़ी ओजस्विनी भाषा में रचना की। अन्यग्रन्थ विवेकविलास, रसिक विनोद, हरि भक्ति विलास नखशिख आदि लिखे। इनका वीर वर्णन संयत और औचित्य पूर्ण है, भाषा भी अस्वाभाविक नहीं हो पाई है। अतएव इनका वीर और शृंगार आदि का वर्णन सरस है। उदाहरण—

थोरी थोरी बेसवारी मरज बिमोरी खरे।
भोरी भोरी बातन बिहसि मुह मोरति॥आदि।

ठाकुर—काल १८२३—१८८०, जाति कायस्थ, स्थान ओरछा और आश्रयदाता जैतपुर नरेश थे। ये बुन्देल खण्डी ठाकुर थे। इन्होंने प्रेम और होली आदि त्यौहारों पर बड़ी सुलझी हुई सरस भावपूर्ण मधुर कविताएँ की हैं। इनकी कविताओं का संग्रह स्व०ईश जी ने ठाकुर-ठसक नाम से प्रकाशित किया था। उदाहरण—

अपने अपने सुदिन गेहन में चहैं दोउ सनेह की बात दै री।
अंतरात में अमित प्रेम भरे समधी अधि मैं बलि आव दै री॥ आदि

पद्मनेश—रचना काल १८००, स्थान पद्मानगर था, ये फारसी के पण्डित थे। इनकी ब्रजभाषा की मुक्तक कविताओं का संग्रह पद्मनेश प्रकाश का नाम प्रसिद्ध है। इन्होंने कवित्त सवैये लिखे हैं। शृंगार वर्णन में भी इन विरोधी वर्ण वर्ण का इन्होंने त्याग नहीं किया। उदाहरण—

पद्मनेस समदुकला विमलिन जुत्ये कुलकन्त क कहर कम।
अदभुत जुत्यो बदमस्त सबम अजहरत अवाजक जुवन बम॥ आदि

शिवदेव—अयोध्या के महाराज मानसिंह का नाम शिव देव था। इन्होंने अब में शृंगार बत्तीसी और शृंगार लतिका नामक दो काव्य लिखे। आपका अनु वर्णन विशिष्ट भावों आया है। भाषा परिमार्जित कोमल

के परतंत्र होने से उनमें प्रतिभा का वह स्वतंत्र चमत्कार नहीं, जो तुलसी तथा उनकी स्वतंत्र रचनाओं में होता। तो भी इनके कारण हिन्दी में कुछ नवीन और आवश्यक विषय का सांगोपांग वर्णन हुआ और उसकी वृद्धि हुई।

कवित्व की दृष्टि से लक्षण ग्रन्थों की रीति से स्वतंत्र काव्य रचना करने वालों को ज्यादा स्वतंत्रता रही। उन्होंने विभिन्न विषयों पर, विभिन्न रसों में मार्मिक, चुभती हुई रसमयी रचनाएं कीं, जो किसी भी साहित्य के लिए गर्व की वस्तु हैं। शृंगार और प्रेम का इस काल का हिन्दी का साहित्य संसार के किसी भी बड़े से बड़े साहित्य से टक्कर ले सकता है। वस्तुतः इन दोनों ही प्रकार के आचार्यों का हिन्दी के साहित्य में उच्च स्थान है, और उनका साहित्य हिन्दी की अमूल्य निधि है।

आधुनिक काल १९००

प्रश्न—संक्षेप में इस काल की राजनैतिक सामाजिक और धार्मिक दशा पर टिप्पणी करिये।

उत्तर—यह काल वस्तुतः सदियों की निद्रामिश्रित संध्या के बाद जागरण का काल है भारत में—अभिनवमुख। मुगल शासन की दो बड़ी विशेषतायें थीं। उन्होंने जहां अमानुष प्रकार से अत्याचार किये, वहां यह भी किया कि सदैव अपने आप को सभी बातों पर संघर्ष करते हुए अनेक छोटे छोटे रजवाड़ों को, शक्ति से आधीन कर, समग्र देश को एक शासन-सूत्र में पिरोने का प्रयत्न किया और व्यवस्था द्वारा शान्ति उत्पन्न करने की चेष्टा की। इतिहास में सिद्ध है अपने इन दो कार्यों में वे बहुत कुछ तक सफल रहे। अकबर से लेकर औरंगजेब के पूर्वार्द्ध तक सारे देश की और अपनी सभी परिस्थितियों में शान्ति व्यवस्था उत्पन्न करने का कुशल सिद्ध हो। इस काल में शासन और व्यवस्था के कुछ अंश में बाद बहुत संघर्ष था महाराष्ट्री प्रान्त में शिवाजी द्वारा दक्षिण के और प्रयत्न अवश्य होते रहे परन्तु व्यवस्था का यह काल शान्ति का था। औरंगजेब का समय मुगल साम्राज्य के उत्कर्ष का काल है और के अंत तक पहुंचकर उसको

परम्पराओं का विद्रोह होता है, धर्म में प्राचीन सिद्धान्तों के, विचारों और आचारों के प्रति विद्रोह होता है और राजनीति में वर्तमान अंग्रेजी सत्ता के विद्रोह होता है। ऐसे लगता है जैसे सदियों से अनेक बन्धनों से बंधी हुई भारतीय आत्मा उन सब को तोड़ फोड़ कर स्वतंत्र होने को छटपटाती है। [illegible] बन्धनों में धर्म के बन्धन भी आ गये और समाज और राजनीति के भी।

साहित्य और भाषा में भी यही प्रवृत्ति कार्य रही है। उसमें पुरानी भाषा के प्रति, पुराने काव्य के नियमों और कविता पद्धतियों के प्रति विद्रोह सा है। सबसे स्वतन्त्र हो साहित्यकार नवीन स्वतन्त्र रूप में चलना चाहता है। उसे पुरानी उपमाओं से, पुराने रूपकों से और पुराने कवि-समय-सिद्ध वर्णनों से चिढ़ सी है। उसे पुराने काव्य के आदर्श खोखे लगते हैं। पुरानी रचना परिपाटी का आदर नहीं करता। उसे अब पुरानी भक्ति और नीति धर्म आदि की रचनायें अच्छी नहीं लगतीं। वह अब प्राचीन कवियों समान बने ये विशिष्ट आदमियों की बात न कह, साधारण जन की [illegible] करना है। राजा और दासी की न कह, इस जगत की कहना है। संक्षेप में ऊपर उठकर उठाना और [illegible] का ग्रहण करना है। नये भाव, भाषा, [illegible] नई रचना पद्धति अपनाना और नवीन और प्रतिभा [illegible] काव्य, समस्त के काव्य की [illegible] है। [illegible] इस [illegible] के एक नवीन [illegible] में [illegible] परिभाषित होता है। भाषा को यह [illegible] है, जिसमें काव्य [illegible] और [illegible] इस काल में [illegible] के [illegible] इस [illegible] में [illegible] इस [illegible] में भी [illegible] काव्य रचना की [illegible] इस [illegible] में [illegible]

मौत्तर प्रदेश ही रहा। अतएव इसी प्रदेश [आगरा, मेरठ, दिल्ली] की भा
भी प्रमुख हुई। कारण, राजधानी होने के नाते यहाँ दूर दूर से विभि
सौदागर, सेठ साहूकार आते थे और आते हुए यहाँ की बोली भी ले जा
थे, इसके अतिरिक्त मुगल सेनाएं और अफसर भी देश के अन्य भागों से
आते हुए यही बोली से आते थे, जिससे इसका प्रचार बढ़ रहा था। फिर
साहित्य रचना गद्य में आधुनिक काल में ही प्रारंभ हुई। यूं साहित्यक
हिन्दी गद्य प्राचीन काल में भी लिखित प्रयोग में आई ही थी, पर
लिखित साहित्य इस काल का अध्ययन है।

गद्य का लिखित रूप हमें प्रारंभ से दो रूपों में प्राप्त होता है, एक
ऐसा जिसमें ब्रजभाषा की प्रमुखता है और दूसरा ऐसा जिसमें खड़ा बो
ठीक तद्भव शब्दों की और फारसी के शब्दों का सम्मिश्रण है। पहले रू
में शृंगार शतक की टीका, गोरख पंथियों का साहित्य, विट्ठल पुत्र
सुखसार, गोकुल नाथ की चौरासी वैष्णवों की वार्ता, तोता और मैना
आदि की गद्य कथाएं आदि मिलती हैं और दूसरे फारसी लिपि में
भारती रूप में कबीर, लुतरी इम्तियाज़ी आदि ने लिखा। लुत्फी ने
तो अपने ग्रन्थ का हिन्दू मुसलमानों के पारस्परिक व्यवहार के लिए हिन्दी
गद्य के निर्माण का प्रयत्न किया, अपने जिस उद्देश्य का
विशेष स्पष्ट रूप से उन्होंने अपने साहित्यिक भारी नामक फारसी हिन्दी कोष
भूमिका में किया है। पर वस्तुतः तो हिन्दी गद्य का उचित प्रारंभ
१८ वीं सदी में मुंशी सदासुख के सुखसागर में ही होता है। इसके
में फिर इंशाअल्ला खां जफर अहमद मिश्र हुए। इनमें फोर्टविलियम के
विलियम्स कालिज के प्रिंसिपल गिलक्राइस्ट के कथन पर कोर्स के लिये पुस्त
लिखी थीं। इसके पश्चात् तो हिन्दी गद्य के प्रचार के लिए, कई
ईसाई, राजनैतिक प्रचार लिखाई लिए गद्य अध्ययन लिए, भारतेन्दु हरिश्च
आदि ने विशेष प्रयत्न किये। किन्तु प्रारंभिक काल में ही, जफर अली
के समय हिन्दी के दो रूप चल पड़े थे [illegible] जफर अली खां
का [illegible] जिसमें फारसी के शब्द
[illegible] दूसरा इंशाअल्ला खां का [illegible] जिसमें फारसी लिपि

काल है, जो भारतेन्दु से प्रथम था है। यह अन्य काल आता है कि हिन्दी गद्य का रूपनिर्माण होकर वह समझ आता है। इस समय गद्य-लेखन का केवल चलन मात्र होता है, इसमें साहित्य कोई विशेष लिखा जाता।

दूसरा युग भारतेन्दु का है, जो खड़ी बोली का संघर्ष-काल आता है, जिसमें विविध विषयों में रचना कर उसके स्वरूप और साहित्य पालन परिवर्तन और परिष्कार होता है। इसी काल में खड़ी बोली में रचना का भी श्री गणेश हो जाता है और पर्याप्त रूप साहित्य लिखा है। यह काल द्विवेदी जी के काल तक चलता है। इस काल में हिन्दी क्षेत्र-विस्तार, विषय-विस्तार आदि होकर वह अपने यौवन में पदार्पण है। यह यौवन काल उसका द्विवेदी युग होता है।

द्विवेदी काल में खड़ी बोली की काट छांट, उसके व्याकरण और की व्यवस्था होती है। द्विवेदीजी सरस्वती पत्रिका चलाते हैं और उसमें लेखकों की भाषाओं की आलोचना प्रत्यालोचना कर उसके व्याकरण आदि कविता आदि के नियमों की व्यवस्था पर बल देते हैं। इसी काल में हिन्दी में अंगरेजी बंगला मराठी गुजराती आदि से अनुवाद भी खूब होते हैं। अभिप्राय यह है कि अब इस काल में हिन्दी के साहित्य की वृद्धि के साथ उसके रूप में भी व्यवस्था स्थिरता और नियमितता आ जाती है। इस काल में अनेक उच्चकोटि की मौलिक ग्रन्थ रचनाएं भी होती हैं।

चौथा काल नवीन काल का नवीन भारत (विकास काल) कहलाता है। यह काल हिन्दी का (खड़ी बोली का) पूर्ण यौवन-काल है, जिसमें उसका अनेक दिशाओं में स्वतन्त्र विकास होता है। काव्य की छायावादी, प्रगतिवादी, वस्तुवादी और प्रगतिवादी आदि काव्य-धारा चल पड़ती है। इस युग को वस्तुतः रवीन्द्र और गांधी-युग भी कहा जाता है। क्योंकि इस काल के हिन्दी साहित्य पर इन दोनों ही महापुरुषों का स्पष्ट छाप पड़ी है, जिसका प्रमाण छायावाद रहस्यवाद और वर्षा का गांव, अछूत और मजदूर आदि के वर्णन के रूप में स्पष्ट मिलता है। यह नवीन काल (विकास काल) ही चल रहा है।

और विभेद जितने स्पष्ट रूप से इस काल में नजर आता है उतना [illegible] आने वाले काल में नहीं जिसमें कि इन सब शैलियों के उचित सम्मिश्रण [illegible] एक आदर्श रूप की प्रतिष्ठा के प्रयत्न हैं। अस्तु, इंशाअल्ला खां को [illegible] के प्रारंभिक काल में एक मुहावरेदार ठेठ खड़ी बोली गद्य लिखने वालों [illegible] अगुआ होने का स्थान प्राप्त है जिसका महत्व अन्यों से कम नहीं। [illegible] नमूना —

'इस सिर झुकाने के साथ दिन रात जपता हूँ उस अपने दाता के [illegible] भेजे हुए प्यार को।"

मुंशी सदा सुख लाल "नियाज़"—ये भी इसी काल में थे। वे [illegible] बायस और दिल्ली के रहने वाले थे। पहिले ये कम्पनी के मुलाज़िम थे, [illegible] काल में रिटायर होकर भजन में लग गये। इन्होंने सुख सागर नाम से [illegible] पत का स्वतंत्र हिन्दी अनुवाद किया, जिसका एक नमूना—

"इससे जाना गया कि संस्कारका भी प्रमाण नहीं आरोपित उपाधि है। जो क्रिया उत्तम हुई तो सौ वर्ष में चाण्डाल से ब्राह्मण हुए और जो क्रिया भ्रष्ट हुई तो वह तुरन्त ही ब्राह्मण से चाण्डाल होता है।"

कहना नहीं होगा, यह आधुनिक प्रचलित आदर्श साहित्यिक गद्य [illegible] प्रारंभिक, पर अच्छा संस्कृत रूप है। मुं० सदा सुख लाल ने [illegible] समाज में प्रचलित और ईसाई पादरियों के द्वारा गृहीत "भाषा" को [illegible] ग्रहण किया था, पर उसमें संस्कृत तत्सम शब्दों के उचित सम्मिश्रण [illegible] व्यवस्थित शैलि वाक्य योजना के कारण से उसे हमारी भाषा की गद्य [illegible] बहुत नज़दीक ले आये हैं। इन्होंने भाषा मुहावरों का, कहावतों का [illegible] [illegible] बहिष्कार नहीं किया है बल्कि उनका उचित सहायता भी [illegible] [illegible] [illegible] और परिमार्जि[illegible] [illegible] [illegible] गद्य का [illegible] [illegible] [illegible] आधुनि[illegible] [illegible] इन्हें [illegible] [illegible] हो सकता

सरल् साहब की भाषा में कवित्व है, संगीत है, ओज है, चित्र-म
भी है, और वर्णन भी है, पर साथ ही अव्यवस्था है, शिथिलता है, म
नहीं है सामर्थ्य नहीं है, व्यवस्था नहीं है, दृढ़ता नहीं है (इस और
कारण की) स्पष्टता और गंभीरता नहीं है—जो कि गद्य के उत्तम
होते हैं।

सदलमिश्र—ये भी उपर्युक्त तीनों लेखकों के समकालीन और लल्लू
जी के साथी कोर्ट विलियम कालिज के प्रोफेसर थे। इन्होंने भी लल्लू ज
जी के समान ही मिस्क्राइस्ट साहब के आदेशानुसार गद्य पुस्त
के आधार पर नासिकेतोपाख्यान लिखा, जिसकी भाषा आपके ही, 'पर
१८२० में नासिकेतोपाख्यान' को कि जिसमें चन्द्रावती की कथा है, ऐ
बोली से कोई कोई समझ नहीं सकता, इसलिए खड़ी बोली में किया है
इस कथन के अनुसार खड़ी बोली है।

इनकी भाषा लल्लू लाल से अधिक परिमार्जित और आज की खड़ी
बोली के अधिक निकट है। इन की वाक्य योजना और भाषा प्रवाहमयी है
उतनी प्रभावित नहीं। न अज भाषा के शब्दों की उतनी भरमार है। मुंशी
सदासुख लाल की अपेक्षा संस्कृत का इन्होंने कम प्रयोग किया और उसकी
पूर्ण तत्सम शब्दों से बचने की चेष्टा की है। मुहावरों, कहावतों, वाग्
प्रयोगों का प्रयोग किया है। भाषा में गठन और चलतापन भी है। इनकी
भाषा आज की खड़ी बोली गद्य का एक प्रारंभिक रूप है, पर वह इतना
दृढ़ और संस्कृत नहीं जितना मुंशी सदासुख लाल की गद्य का, जो कि
लाल की [illegible] भाषा की तुलना में आ सकती है।
[illegible] जो प्रेम सागर की भाषा में
[illegible] खड़ी बोली गद्य का एक
[illegible] लाल अब उपस्थित किए,
[illegible] शैलियों में स्थान बनाती है।
[illegible] इन चार गद्य लेखकों की शैलियों
[illegible] विचार करो।

का आविष्कार सा है। उनका प्रयोग है भी तो उनको बिगाड़ कर उनका तद्‌भव रूप बना कर।

सारांश, इन सब में मुंशी सदासुख लाल को छोड़ कर अन्य किसी की भी शैली आधुनिक खड़ी बोली के गद्य का पूर्णतया आदर्श नहीं बन सकती। उन सब में कुछ न कुछ अव्यवहारिकता है। फलतः मुंशी सदासुख लाल का [illegible] चारों गद्य प्रवर्तकों में प्रमुख स्थान है।

प्रश्न—राजा शिव प्रसाद सितारे हिन्द और राजा लक्ष्मण सिंह का परिचय दे कर दोनों की शैलियों का अन्तर स्पष्ट करिये।

उत्तर—इन दोनों लेखकों से वस्तुतः बीसवीं सदी का साहित्य आरम्भ होता है। ये दोनों महानुभाव और इनके साथ कुछ एक अन्य छोटे मोटे लेखक वस्तुतः लल्लू लाल आदि के और भारतेन्दु के युगों के बीच [illegible] आते हैं। इनमें से प्रथम सितारे हिन्द का नाम आता है।

राजा शिव प्रसाद सितारे हिन्द —ये १८८० —१८२९ तक के काल में थे। इन्होंने प्रथम बनारस से, बनारस अखबार निकाला और बाद में जब ये स्कूल इंस्पैक्टर हो गये, तो इन्होंने छोटी बड़ी स्कूल की पाठ्य पुस्तकें लिखीं। इनकी भाषा शुद्ध [illegible] का सरल मिश्र के [illegible]

[illegible]

हिन्दी इस देश के हिन्दू बोलते हैं और उर्दू यहां के मुसलमान और फारसी पढ़े लिखों की बोल-चाल है। हिन्दी में संस्कृत के शब्द अधिक आते है और उर्दू में अरबी फारसी के।"।

इस प्रकार इस समय में ये दो प्रधान शैलियां चल पड़ी थी और अनेक दिशाओं में हिन्दी के लिए बड़े २ आदमी प्रयत्न कर रहे थे। पंजाब में इसी काल में नवीन चन्द्रराय नामक बंगाली सज्जन और भीमसेन किशोरी लाल आर्य समाज प्रचारक भी हिन्दी प्रचार का कार्य कर रहे थे। पर हिन्दी की विशेष उन्नति इससे आगे भारतेन्दु युग में ही मिलती है, जब कि हिन्दी साहित्य बहुमुखी हो अनेक धाराओं में प्रवाहित होता है।

प्रश्न--हिन्दी प्रचार में ईसाई पादरियों का क्या हाथ रहा?

उत्तर--अंग्रेज वणिकों और शासकों के साथ कुछ ईसाई धर्म प्रचारक भी इनके साथ यहां आये थे। उन्हें धर्म प्रचार के लिए राज्य से सहायता भी मिलती थी। उनके लिए क्षेत्र भी यहां खूब उपजाऊ था। यहां की अधिकांश जनता अत्यन्त पिछड़ी हुई, गरीब, अमीरों और अफसर लोगों के द्वारा दलित और निराश्रय थी। अछूत थे, जो हिन्दुओं के सामाजिक अत्याचारों से पीड़ित थे। और फिर समस्त भारतीय समाज की अवस्था डावांडोल थी। कुशल व बड़ी आशाओं से धर्म परिवर्तन द्वारा इन अभ्युदय लोगों को अपने में मिला सकते थे। उन्होंने कार्य प्रारंभ किया, स्थान स्थान पर, देश में [illegible] प्रचार का प्रबन्ध, शिक्षा केन्द्र आदि स्थापित हुए। उनके सामने एक बड़ा प्रश्न था भाषा का कौनसी भाषा में प्रचार करें [illegible] को धार्मिक जनता की परिचित भाषा थी और [illegible] प्रचार-साहित्य छाप कर [illegible] एक से अपने धर्म [illegible] और दूसरे [illegible] और [illegible] पर भाषा की [illegible] हिन्दी के प्रचार का [illegible] प्रबन्धों पर परिष्कार करने

प्रकाशित हो। प्रकाशित होते हैं। गद्य में दुनियां भर के विषय लिखने के प्रयत्न किये गए—इनमें, काव्य, नाटक, दर्शन, कला, मनोविज्ञान, अर्थ शास्त्र, राजनीति, इतिहास, विज्ञान आदि सब हैं। भारतेन्दु जैसे विशिष्ट व्यक्तियों ने मौलिक भी लिखा और अन्य बंगला, संस्कृत आदि से अनुवाद भी किया। अनुवादों में अनुवाद ही किए। अनेक समाचार पत्र निकले – इनमें समाचारों के साथ छोटे मोटे विभिन्न विषयों पर निबन्ध भी होते थे, जो इतने मुद्दा होने पर कि, विद्वानों की राय है, इतने बाद के समय में भी नहीं लिखे गये। इस समय बंगला और अंगरेजी के ढंग पर गजलें लिखी गईं, उपन्यासों की तो भरमार ही चल पड़ी। अन्य भाषाओं से भी खरी अनुवाद हुए। गद्य का रूप निखर कर वह अब सभी विषयों के लिखने में समर्थ होती जा रही थी। किंतु कविता इस काल में भी प्रधानतया ब्रजभाषा में ही हुई। कारण खड़ी बोली में उस समय इतनी स्वच्छता सामर्थ्य नहीं आई थी कि वह कविता के क्षेत्र में भी इतनी सफलता से सूक्ष्म भावों की अभिव्यक्ति में सफल हो सके—उसको छंद के ढांचे में बिठाना बड़ा कठिन था। पर फिर भी खड़ी बोली में पद्य रचना प्रारम्भ हो गई थी। कवि लोग संस्कृत छन्दों में संस्कृत के व्याकरण के आधार पर समासों से काम लेकर हिन्दी गद्य को फिट बैठा देते थे। इस प्रकार गद्य और पद्य की भाषा एक करने के लिए प्रयत्न हो रहे थे। सारांशतः, भारतेन्दु के समय की साहित्यिक प्रगति को हम तीन श्रेणियों में बाँट सकते हैं,—

१—विषय-वस्तु नयी बोली के रूप को अलग श्रेणियों की दृष्टि में से विषय चुन, इन श्रेणियों के सिद्धसंभूत आदर्श रूप में उसकी प्रतिष्ठा हुई। हिन्दी गद्य का एक साहित्यिक रूप स्थिर हुआ।

२—विषयानुरूप अनेक शैलियों विकास का प्रयोजन और विकास अर्थात् गम्भीर विषय के लिए गम्भीर संस्कृत गर्भित और सहज आकर्षक विषय के लिए चलताऊ मुहावरों की भरमार आदि का सहज करना आदि।

३—साहित्य के विभिन्न अंगों का पूर्ण रूप से उपन्यास लिखे गये, कहानियां लिखी गईं आलोचनात्मक रूप से अनेक [illegible] निबन्धों लिखे गये, [illegible] अनुवाद का [illegible] गये,

में गुजारे। इनका स्वास्थ्य भी खराब हो गया और अन्त में ३१ साल की ही आयु में आप का देहान्त हो गया।

इतने अल्पकाल में ही आपने हिन्दी की जो सेवा की वह अनुपम है। इन्होंने स्वयं साहित्य लिखा और औरों को प्रेरणा देकर लिखवाया। आप के आदर्श रूप की स्थापना की। हिन्दी साहित्य की वृद्धि के लिए सिर तोड़ प्रयत्न किया। ये वस्तुतः युगपुरुष थे। अपने समय के प्रधान चालक ही थे। इन्होंने बनारस से दैनिक, कवि वचन सुधा मासिक, हरिश्चन्द्र मैगजीन, बाला बोधिनी पत्रिका निकाली। अनुवादों में सर्व प्रथम बंगला से विद्या सुन्दर नामक नाटक का अनुवाद किया। इसके पश्चात् आपने संस्कृत नाटकों का भी अनुवाद किया। स्वतन्त्र रचनाएं की। विविध विषयों पर लिखा। लेख, कविता, कहानी, नाटक सभी कुछ लिखे। नाटकों में इन्होंने पद्यानुवाद तो ब्रज में किया है पर अन्य सब सभी बोली गद्य में। सभी बोली में भी इन्होंने पद्य रचना की है।

इनकी भाषा आदर्श रूप थी, जिसमें संस्कृत प्रधान थी, पर फारसी का भी उचित सम्मिश्रण था। सीधी टूटी, परिष्कृत, साधारणित, व्यंग पूर्ण तीनों भाषा आप सामान्यतः लिखते थे। पर विषय के अनुसार ये अपनी शैली बदल देते थे। कटु आलोचनाओं के लिए आप तीखी फारसी-मिश्रित चुटीली भाषा लेते थे, वर्णनात्मक या अन्य ऐसे ही सुबोध विषय के लिए सरल सीधी प्रसाद-पूर्ण लिखते थे और गंभीर दार्शनिक विषयों पर आप परिष्कृत संस्कृतमय गंभीर भाषा में लिखते थे। आपको सभी शैलियों पर पूर्ण अधिकार था।

आप आचार्य थे, कवि थे, नाटककार थे, कहानीकार थे, सम्पादक थे, सफल निबन्धकार थे और अपने समय के सब से बड़े साहित्यिक मुखपत्र और प्रेरक थे। इसने हिन्दी की भावना, आराधना की प्रबल पुकार, चेतना, स्वाभिमान और जिज्ञासा द्वारा के प्रति अपनत्व हिन्दी साहित्य में प्रथम हिन्दी की कहानी के जन्म दाता थे। आप के आलोचना के स्वतन्त्रता के और के नवीनता के विरोधी थे इन्हीं को समन्वय भाषा रचनाओं से लिखना है। आपने आपने के कहानी के नाटकों के परिवर्तन के इस आलोचना और नवीनता के

भट्ट की कैसा विनोदीपन नहीं है । भाषा संस्कृत गर्भित, [illegible] और संयत है ।

अम्बिकादत्त व्यास—ये संस्कृत के अद्वितीय पण्डित थे । इन्होंने [illegible] संस्कृत में शिवाजी का चरित-रूप आधुनिक ढंग [illegible] इतिहास लिखा है । ये आशुकवि थे और बचपन से ही सुन्दर कविता [illegible] थे । हिन्दी पर भी आपको पूरा अधिकार था । ये संस्कृत गर्भित, [illegible] भाषी, छोटे २ वाक्य वाली सरल और विशद भाषा लिखते थे । हिन्दी [illegible] इन्होंने पहिले पीयूष प्रवाह नामक समाचार पत्र निकाला । अखिल ही [illegible] नामक नाटक लिखे । तत्व मीमांसा नामक भाषा पर एक निबंधात्मक [illegible] लिखा । अवतार मीमांसा, मनुस्मृति आदि सनातन धर्म के ग्रन्थ लिखे ।

विषय के अनुरूप आप भी भाषा बदलते थे । आलोचना और तर्क [illegible] और गंभीर विवेचन की ओर । सामाजिक लेखों में आप व्यंग्यों [illegible] लिखों और मुहावरों से सहायता लेते थे । अलंकारों का ख्याल करने [illegible] उदाहरण, 'जिस लड़के को दूर्वे में चुपड़ी तक जगह नहीं जाता [illegible] खाने से जो हाथ धोना तक नहीं जाता, उस लड़के के विरुद्ध दुष्ट [illegible] देश के ऐसे कोमल हृदय में यूरोप और अमेरिका की लेनी की आती है ।"

बालमुकुन्द गुप्त ये भारतेन्दु के मित्र और हास्य के अनुपम [illegible] थे । इनके लिए शंभु के चिट्ठे प्रसिद्ध हास्य के ग्रन्थ हैं । इनकी [illegible] अखबार, व्यंग्य पूर्ण, चुभती हुई मुहावरेदार होती थी । इन्होंने [illegible] और भारत मित्र नामक दो पत्र भी निकाले थे ।

शैली—भारतेन्दु के व्यक्तित्व का दूसरा पक्ष उनके गद्य के विषय [illegible] में अभिव्यक्त हुआ है ।

[illegible]

भिन्न २ लेखकों की भिन्न २ विशेषताओं के लिये शैलियों का विकास हो रहा था।

स्पष्ट ही इस सारी प्रगति के प्रधान संचालक द्विवेदी जी ही थे। इस युग की मुख्य प्रेरणा ये ही थे। इस काल के साहित्य का और उसमें इस काल में वर्तमान प्रवृत्तियों का वर्णन करते हुए द्विवेदी जी का उनकी सरस्वती के इतिहास का वर्णन है उनका हिन्दी साहित्य और गद्य पर उस समय ऐसा ही सर्वव्यापी प्रभाव पड़ा था।

उनका युग गद्य का यौवन काल है, जब वह सब प्रकार परिपुष्ट हो, निखरे हुए परिमार्जित अभिनव मधुर रूप में उपस्थित होती है और उसका अपने पूर्ण सौन्दर्य को प्राप्त होने के पश्चात आगे चलकर अनेक शैलियों-शैलियों में विकास होता है।

प्रश्न—भारतेन्दु के पश्चात् के कुछ-एक प्रधान लेखकों का संक्षिप्त परिचय दो।

आ० महावीर प्रसाद द्विवेदी—इस काल १९२१। ये अपने समय के साहित्यिक युग पुरुष थे। इन्होंने इलाहाबाद से सरस्वती मासिक पत्रिका निकाल कर हिन्दी के प्रचार और उत्थान का प्रबल प्रारम्भ किया था और आजन्म उसे घाटे में भी चला कर निभाते रहे। द्विवेदी जी और उनकी पत्रिका का इतिहास वस्तुतः अपने काल का साहित्यिक इतिहास है। ये अपने काल की संचालक शक्ति थे। इनके प्रयत्न हिन्दी में — भाषा में और साहित्य में भी — विधान व्यवस्था की ओर रहे। इन्होंने छोटे २ व्याकरण विषयक लेख लिखे, अनेकों की भाषा में दोष निकाले, आलोचना की और लेखकों का शुद्ध परिमार्जित और व्याकरण-सिद्ध भाषा लिखने की ओर ध्यान आकृष्ट किया। साथ ही भाषा में कोमा पाई आदि विराम चिन्हों के प्रयोग की व्यवस्था का। इस रूप में ये हिन्दी गद्य के सर्व प्रमुख विधान निर्माता व्यवस्थापक कहते हैं।

ये कवि भी थे। इन्होंने ब्रज और खड़ी बोली में कविता लिखी। एक कुशल और आकर्षक नव-उन्मेषक भी थे इन्होंने अनेक छोटे मोटे—विज्ञान से लेकर, भाषा साहित्य धर्म आदि विषयों तक पर सुन्दर निबन्ध लिखे

कलम चलाई। इनके उपन्यासों में भिन्न भिन्न प्रसंगों पर इन के अनुसार ही भाषा का प्रयोग किया है। कथोपकथन में, व्याख्यान में इन्होंने पात्रानुरूप ही भाषा लिखी है, जिससे पात्रों की भाषा-गत विशेषता स्पष्ट रहती है। आम तौर पर इनकी शैली संस्कृत, फारसी, अंग्रेजी और उर्दू इन चारों भाषाओं से पुष्ट भाषा में सरल, सुबोध और व्यञ्जना-पूर्ण होती थी। आप अपने समय के सर्वोत्कृष्ट उपन्यास और कहानी के लेखक थे।

पं० शिवशम्भु शर्मा हर्षा कौशिक—जन्म सं० १९२८ स्थान पञ्जाब। ये बहुत अच्छा गद्य में कहानियां लिखते हैं। इनके कई संग्रह छप चुके हैं। ये आदर्श कहानीकार माने जाते हैं। इन्होंने अधिकतर सामाजिक कहानियां लिखी हैं। भाषा इन की परिमार्जित और सरल सुबोध होती है।

श्री सुदर्शन—जन्म १९०० । ये भी आदर्श कहानीकार हैं। इनकी बहुत कहानियां हैं। इनके सभी पात्र अधिकतर सामाजिक होते हैं। कुछ एक कहानियां इन्होंने ऐतिहासिक भी लिखी हैं। ये उच्चकोटि के लेखक हैं।

पण्डित लोचन शर्मा एम०—जन्म १९२८। इन्होंने अब साहित्य में कहानीकार और छोटे छोटे उपन्यास लिखने प्रारम्भ किये थे तो धूम मचा दी थी। कहानी लिखने की, वर्णन करने की अच्छी शैली लेकर आये हैं। इनकी अधिकतर रचनाओं में अनोखा कौशल पाया। ये कवि, कहानीकार, उपन्यासकार और नाटककार हैं। इनके साहित्य में अधिकतर इन्होंने सामाजिक बुराइयों और संकीर्ण विचारों का या समाज के प्रचलित रूढ़ियों का

[illegible]

का सौभाग्य था कि उसको आप जैसे धुरंधर सेवक मिले। हिन्दी इनसे गर्वान्वित है।

डा० धीरेन्द्र वर्मा—ये इलाहाबाद यूनिवर्सिटी में हैं। इन्होंने भाषा उसके साहित्य और भाषा विज्ञान के विषय में बड़े खोज पूर्ण ग्रन्थ लिखे हैं। भारतीय प्राचीन सभ्यता संस्कृति के इतिहास के विषय में भी इनकी गंभीर रिसर्च है। आपने प्राचीन भारत की सभ्यता और संस्कृति नाम का ग्रन्थ इस विषय में लिखा है।

इनके अतिरिक्त हिन्दी गद्य को अन्य अनेक मार्मिक, शक्तिशाली लेखक मिले—जो अथक अनवरत परिश्रम करके हिन्दी के साहित्य में वृद्धि करते रहे। अब हिन्दी गद्य सर्वथा सम्पूर्ण और विकसित होकर राष्ट्र भाषा के पद पर आसीन है, यह सब इन्हीं सच्चे सेवकों की भक्ति का फल है।

प्रश्न—आधुनिक काल के पद्य-साहित्य पर एक विशद नोट लिखो, जिसमें उसकी विशेष प्रवृत्तियों का पता लगे।

उत्तर—पूर्व-परम्परा से प्राप्त ब्रज-भाषा काव्य भारतेन्दु के काव्य काल तक चलता है। उसके विषय, उस समय भी वे ही शृंगार, धर्म, नीति, प्रकृति-वर्णन, अलंकार वर्णन आदि रीति कालीन ही रहे। कृष्ण लीला के भी गीत गाये जाते थे। इनमें कुछ पूर्व राजा लक्ष्मण सिंह ने ब्रज भाषा में कालिदास के कई ग्रन्थों का पद्यबद्ध अनुवाद किया। इनसे भी पहिले सरदार सेवक आदि हाल के ही कवि हुए थे। किन्तु वे लोग प्राचीन परिपाटी का ही निर्वाह कर रहे थे। नवीनता या आधुनिकता उनमें नहीं थी। राजा लक्ष्मण सिंह ने जो अच्छा अनुवाद ही किये थे, उनमें तो नवीनता का प्रश्न ही नहीं। ब्रज भाषा में नवीनता का अवतार भारतेन्दु से ही होता है। भारतेन्दु अपने समय के साहित्य की केन्द्रीय आत्मा थे, उनकी धारा और प्रभाव साहित्य के अनेक क्षेत्र में पड़े। ब्रज भाषा काव्य पर भी पड़ा। भारतेन्दु प्राचीनता के विरोधी नहीं थे, प्रत्युत उन्हें उसमें पर्याप्त सहिष्णुता थी पर वे उस नवीन समय और परिस्थिति के अनुरूप नवीन रूप में [illegible] चाहते थे। यही उस समय उनका ब्रज भाषा के प्रति भी था और उस समय प्रचलित काव्य पद्धति के प्रति भी था। उन्होंने उसको निबाहा

मजदूर, बंगाली बैरिस्टर और राजाओं जमींदारों तक ने इस आन्दोलन में भा
लिया। साहित्यिक भी भला कैसे बच सकता था? उसने सबसे आगे होक
स्वदेश और स्वराज्य के गान गाये। कहना नहीं होगा, [illegible] विषय म
कविता के आरंभ भी सर्व प्रथम भारतेन्दु ही हुए थे। अप
धन-धान्य से भारित आने पर, सर्व प्रथम इन्होंने ही इस प्रकार का 'भार
दुर्दशा' नामक राष्ट्रीय विचारों का काव्य लिखा, जिसमें स्पष्ट रूपेण कांग्रे
लिखा पाता है। भारतेन्दु केवल भावुक कवि ही नहीं थे, वे दूरदर्शी और वि
व्यवसायी सुधारक भी थे। उन विषयों की समस्या से लेकर वस्तुतः
की हल्द लिखा थी। इन सभी विषयों पर इन्होंने कविताएँ भी लिखी हैं
सदियों से सोई हुई, जाग को सूती हुई, भय में पड़ी हुई भारतीय जा
का चैतन्य करने का प्रयत्न था, सो, इन सभी विषयों की अवतारणा
समय की दिल्ली तत्-भाषा में हुई, जिसके लिए वस्तु पर ये स्वामवान हैं
काल थे। भारतेन्दु के समान ही अनेक ऐसे कवि हुए, जिन्होंने इस स
हरदेव आदि की राष्ट्रीय कविताएँ थीं। वर्षा वार्ता, क्योंकि इस स
कविता के लिए अवश्यक समझी जाती थी, इसलिए समस्या में दी हुई
काव्य पाठ चलती रहा बहुत दिनों तक। समस्या पूर्ति में इस समय
सभी विषयों पर कविताएँ हुईं। इसके साथ ही साथ या बाद को [illegible]
का हुआ भारतेन्दु और इसके पूर्व लिखने का भी प्रचलन हुआ। किन्तु यह
[illegible] समस्याओं और कवियों से आगे बढ़ नहीं हुआ। बल्कि
[illegible] हुआ। कवियों की अवहेलना भी यह है,
[illegible] नहीं रह गई। समस्या इस समय [illegible]
[illegible] हैं, जिसके लिए कवि विशेष अवस्थाओं में होना
[illegible] कवियों का [illegible]
[illegible] कविता के [illegible]
[illegible] हैं। [illegible]

मात्रिक छन्दों के अनेक नवीन रूपों का भी चलन हुआ। हिन्दी में गजलें भी लिखी गईं। प्रकृति वर्णन भी हुआ। पर प्रकृति को इस समय के ब्रज भाषा के कवियों ने भी उसके उद्दीपन विभाव के रूप में, केवल जड़ रूप में ही देखा, उसको सजीव नहीं देखा, जैसा कि बाद में प्रसाद, पन्त, निराला आदि ने। उन्होंने तो उसी प्राचीन ढर्रे बंधे रूप में, उसके स्थूल रूपों का सुन्दर और सरस चित्र उतारा है। पर उसको स्वतन्त्र अस्तित्व का उसकी अनुभूति का अनुभव नहीं किया, जैसा कि बाद में प्रचलित प्रकृतिवाद में हुआ। इन लोगों ने प्रकृति को रसों की सहायिका उद्दीपन रूप में ही देखा, स्वतंत्र रूप में नहीं।

मुख्य मुख्य विशेषतायें ब्रजभाषा काव्य की आधुनिक काल में ये ही हैं। इनमें से अनेक विशेषतायें उसी रूप में वहीं बोली काव्य में भी रहीं, पर वही बोली जो काव्य द्वारा आगे विविध विकासों में बढ़ कर साहित्य नवीन रूप धारण कर लेती है, और ब्रजभाषा में लिखना उत्तर काल में मात्र बन्द हो जाता है। वैसे, ब्रजभाषा में लिखने वाले लोग आज भी हैं और वे लिखते भी हैं, पर ब्रजभाषा का युग वस्तुतः रीतिकाल में ही समाप्त हो जाता है। उसके पश्चात् तो उसमें जो कुछ साहित्य बनता है, वह विशेषतया इसलिए बनता है कि वही बोली उस समय पद्य काव्य के उपयुक्त नहीं होती और वह बनता भी तभी तक है, जब तक कि वही बोली उसका स्थान लेने के योग्य नहीं हो जाती। फिर बन्द हो जाता है।

पर साहित्य में स्थान न रहने पर भी ब्रजभाषा का मरना न कभी नहीं हो जाता। यह तो उसकी चलती भाषाओं की स्वाभाविक गति है। ब्रजभाषा में इतना सुन्दर, इतना प्रभूत और इतने परिमाण में साहित्य भण्डार है कि उसका अध्ययन ऐसे ही किया जाता रहेगा, जैसे अब किया जाता है। वह भारत की प्रमुख साहित्यिक भाषा रह चुकी है, जिसका काव्य लगभग सात आठ सौ साल रहा और जिसके क्षेत्र का भी विस्तार बहुत दूर तक रहा। इसलिए भारतीय भाषाओं में ब्रजभाषा भी अपना महत्व रखेगी और अपना स्थान रखेगी। जब तक भारत में कृष्ण का नाम रहेगा, तब तक ब्रजभाषा भी बनी ही रहेगी।

बीजरेखी में एक अनुवाद आप कहते हैं—कहाँ कलकत्तालिपि ! केवल ! मोह !

आपन चाहिं अनेक अनुवाद करि आत्मवाणी रोपे ।

इसी प्रकार अन्यान्य पत्रों में, इन्होंने राष्ट्रीय आन्दोलन से सम्बद्ध, स्वदेश, स्वभाषा, स्वजाति, स्वराज्य स्वधर्म और स्वसंस्कृति, अछूत, स्त्री, गरीब, पीड़ित, आदि पर लिखा है। अंग्रेजों की, अंग्रेजों के राज्य की निन्दा करने वाले भावों को अनूदित किया है। इसके अतिरिक्त इन्होंने संस्कृत और बंगला के कई नाटकों का भी अनुवाद किया है, जिनका कुछ भाग पत्रों में अनूदित है और कुछ भाग अप्रकाशित है। इसके अतिरिक्त इन्होंने कुछ और ऐतिहासिक कथाओं के भी कुछ लिखे हैं।

[illegible]

इतनी परिमार्जित अवस्था बाद के काल में हो आती है, भारतेन्दु काल में तो काव्य में प्रधानता ब्रज की ही रहती है। अधिकतर काव्य उसी में लिखे जाते हैं, हां खड़ी बोली में पद्य रचना प्रारम्भ हो जाती है। पर उसकी सामर्थ्य में सन्देह बना रहता है इनके काल में।

भारतेन्दु ने एक ही रस में नहीं लिखा। इन्होंने शृंगार, वीर, हास्य और करुण सभी समान सफलतापूर्वक लिखे हैं।

प्रश्न—भारतेन्दु के समय में या उनके बाद के अन्य ब्रजभाषा के कवियों का संक्षेप में यथा संभव सोदाहरण परिचय दो।

उत्तर—भारतेन्दु काल के और उनके बाद के कवियों का संक्षेप में परिचय नीचे दिया है।

पं० प्रताप नारायण मिश्र—ये भारतेन्दु के परम भक्त मित्र थे। उनके प्रभाव में इन्होंने भी ब्रजभाषा में सुन्दर कविताएँ की हैं। कविताओं के विषय भारत दुर्दशा या अन्य ऐसे ही राष्ट्रीय विचारों के साथ हास्य गोरक्षा आदि भी रखे हैं। गोरक्षा, बुढ़ापा, हिन्दू, हिन्दी, हिन्दुस्तान हरगंगा, तृष्णाष्टक आदि इनकी ऐसी ही स्वतंत्र कविताएं हैं। इन्होंने हास्य रस भी सुन्दर सरसजनोचित लिखा है। ये अच्छे पढ़े लिखे संस्कृत के पण्डित थे।

प्रेमघन—इनका पूरा नाम पं० बदरीनारायण चौधरी प्रेमघन था ये भी स्वदेश और स्वराज्य की भावना रखते थे, पर वह इतनी उग्र नहीं थी ये विशेष विशेष महत्व पूर्ण अवसरों पर, स्वतंत्र वर्णनात्मक राष्ट्रिय कविताएं लिखते थे। इन्होंने प्रिंस आफ वेल्स के भारतेश्वरी के भेंट होने पर, विक्टोरिया की हीरक-जुबिली पर सुन्दर कविताएं लिखी हैं इन्होंने भारत सौभाग्य नामक नाटक भी लिखा था, जिसका कविता-भाग बहुत सरस माना जाता है। उदाहरण:—

> भयो मूमि भारत में महाभयंकर भारत।
> अए कौरवर सकल सुमट एक ही मेंग गारत ॥आदि॥

ठाकुर जगमोहन सिंह—ये भी भारतेन्दु जी के सहयोगी थे और

ब्रजभाषा में लिखते थे। इनका प्रकृति वर्णन संस्कृत के ढंग का सजीव और अत्यन्त उत्कृष्ट माना जाता है।

अम्बिका दत्त व्यास—इनका वर्णन गद्य भाग में हो चुका है। इन्होंने ब्रजभाषा पद्य लिखे हैं।

पं० श्रीधर पाठक—इन्होंने ब्रजभाषा में प्रकृति वर्णन बहुत सुन्दर और समय किया है। इन्होंने हिमालय वर्णन, कश्मीर वर्णन और ऋतु विषयक प्रकृति काव्य लिखे हैं, जिन में प्रकृति की सजीव मूर्ति, आत्मा का चित्रण किया है। भारतोत्थान और भारत प्रशंसा नामक काव्य इनके देश-भक्ति के काव्य हैं। एक नमूना:—

अनगिन उत्तुंग शृङ्ग चहुं दिसि देत दिखाई।
सिर परसत आकाश बचन पाताल पुजाई॥(हिमालय वर्णन)

सत्यनारायण कविरत्न—ये ब्रजभाषा के प्रसिद्ध कवि थे। भक्त थे। इन्होंने उषा नाम चरित और मालतिमाधव का ब्रजभाषा में अनुवाद किया था। उदाहरण—

सब ओर जिते दिन देखत हैं। इन सोभा भूमि माह रही।
चहुं दाहि दौं उर बाहर में बहुरूप अनूप दिखाई रही। आदि॥

विशेषता दृष्टि—आप ब्रजभाषा के [illegible]

[illegible]

लिखा है। एक कविता में नेता की रेल के इंजन से समता की है, दिग्वों की लम्बी से। आप कहते हैं दिग्वों की तरह उनका पढ़ाई के (आपत्ति में, नेता को (दिग्वों की तरह) पीछे की ओर खींचती है उनकाई पर आगे को धकेलती है। उदाहरण:

परमि सलिल तेरो सीतल है पीन कौन ॥
लागे सब्द मृदन जगीयो ज्ञानप्यारी को ॥ आदि।

रामचन्द्र शुक्ल- ये हिंदी के प्रसिद्ध आचार्य थे, जो हिंदी के निर्माताओं में माने जाते हैं। इन्होंने युद्ध-शक्ति नामक ग्रंथ लिखा है। इन्होंने इसमें करुण का सुन्दर चित्र खींचा है। इनका इस काव्य में हेतुवित का लाइट ऑफ एशिया था। इनका प्रकृति अद्भुत सुन्दर माना जाता है। उदाहरण:—

देखि परे सांवरे सलोने कहुँ गोरे मुख।
लटकी विशाल बक बलनी बिछी है स्याम ॥ आदि

जगन्नाथ दास रत्नाकर—ये भारतेन्दु काल के थे और ब्रज में इतने भक्त थे कि सदैव उसी में कविता की। खड़ी बोली के आन्दो ये अग्रगामिन रहे। इनके ग्रन्थ हरिश्चन्द्र, गंगा लहरी, गंगावतरण उद्धव शतक हैं। इन्होंने शृंगार वीर प्रशस्तक, भक्ति आदि अनेक विषय लिखा है और प्रकृति वर्णन भी सुन्दर किया है। उदाहरण:।

वीर अभिमन्यु की उदात्त कृपान बल।
सत्र असनी सौं चक्रव्यूह माहीं चमकी ॥

इन लोगों के अतिरिक्त तथा प्रसाद गुप्त सनेही, शंकर, दीन नारायण पाण्डेय के नाम आते हैं, जिन्हों ने खड़ी बोली और ब्रज दोनों में कविता की हैं।

प्रश्न – खड़ी बोली के पद्य साहित्य पर एक ऐतिहासिक और लिखिए।

उत्तर—वैसे, सौभाग्यवश कह के तो हम खड़ी बोली के पद्य-साहि इतिहास को बहुत दूर तक खींच कर ले जा सकते हैं। कबीर सूरदास की इसी भाषा का पूर्वरूप मानी जा सकती है। आधुनिक काल से पहिले।

था विकासों को अपने बृहत् साहित्य-गर्भ में समाये खड़ी बोली इस समय शैशव माया के पद पर आसीन है। अभी यह सब उन्नति या विकास इन थोड़े से पिछले ३०–४० सालों में ही हुई है। अतः समझा जा सकता है कितनी तेजी से खड़ी बोली साहित्य उन्नति के पथ पर बढ़ा है। उसका समग्र वर्णन एक ही लेख में नहीं हो सकता। उसकी गति विभिन्न प्रभावों के आधार पर, उसे यदि कई समयों में विभक्त कर लिया जाय, तभी उसकी धारा का समुचित और क्रमिक ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है। इस लिए थोड़े में और स्पष्ट रूप में खड़ी बोली के पद्य साहित्य का ज्ञान प्राप्त करने के लिए उसे चार उत्थानों (या कालों) में बांट लिया जाता है।

प्रथम उत्थान, भारतेन्दु काल से प्रारम्भ होकर अब तक चलता है परन्तु साहित्य क्षेत्र में द्विवेदी जी का प्रभाव नहीं पड़ता। भारतेन्दु के पश्चात् इस दिन से ही प्रकृतिवाद काल में चलती रही। यह प्रथम उत्थान का काल नहीं बोली पद्य साहित्य का शैशव काल है। इस में खड़ी बोली में पद्य रचना प्रारम्भ हो जाती है और इस में अनेक विषयों पर फुटकल तौकिया कविताएं लिखी जाती हैं। पद्य में ब्रज भाषा की ही प्रधानता रहती है, इस काल में खड़ी बोली में पद्य रचना दो तीन रूपों में प्रचलित होती है। कुछ तो वह की तरह के छन्दों में खड़ी बोली लिखी गई। भारतेन्दु ने स्वयं भी लिखी, उन के मित्रों ने भी लिखी। कुछ फारसी प्रणाली के कवित्त सवैया आदि छन्दों में लिखी गई। कुछ ख्याल और लावनियों के ढंग में भी खड़ी बोली की रचनाएं लिखी गई। [illegible] भारतेन्दु ने भी ख्याल और लावनियां लिखी और इन के लिखने में [illegible] में खड़ी बोली के छन्दों में प्रयोग होने लगा। [illegible] के ढंग पर भी खड़ी बोली का एक विशेष स्वरूप चल पड़ा। इस प्रकार इस में अनेकता प्रकार खड़ी बोली का [illegible] के रहना—के अनेक रूप हो गए हिन्दी लेखकों ने और अब तक उन्हीं का व्यवहार करते हैं। इसी प्रकार [illegible] और

मुश्किल नहीं था। दूसरे, इस बोली में भावों के व्यक्त करने की ऐसी भी लाक्षणिकता और वर्णन के विषय भी असाधारण होते हैं। अतएव उस में कवि को वर्णन में कोई बाधा नहीं पड़ी, पर काव्य के कठिन सूक्ष्म अवयव में कहीं कोई दोष उत्पन्न हो जाता है। अतएव आरंभिक अवस्था में ब्रजभाषा के वर्णन में भी कठिनाई लगती थी। अतएव भारतेन्दु काल में कहीं कोई एक स्थान के वर्णन विषय वर्णनात्मक ही रहे। भारतेन्दु के पश्चात् स्वदेशी और स्वदेश के आन्दोलन के साथ (इस भाषा) कहीं बोली का भी आन्दोलन चलता है, जो आशातीत सफलता प्राप्त करता है।

द्विवेदी जी के काल की नई बोली पद्य रचना का द्वितीय उत्थान काल का समझना है। इन दोनों ही कालों में समय का कोई विशेष अन्तर नहीं है। अन्तर केवल प्रवृत्तियों और विधान का है। भारतेन्दु काल की अनेक प्रवृत्तियों में से जो काव्य के अनुकूल थीं, उनका द्विवेदी काल में पूर्ण विधान हुआ और जो काव्य के अनुकूल नहीं समझी गईं, उनका त्याग हुआ। ब्रज भाषा की ऐसी ही प्रवृत्ति थी, जो काव्य के अनुकूल होने से छूट गयी। काव्य में विविध सामयिक विषयों का समावेश करने की प्रवृत्ति का ग्रहण हुआ, और इसका सूत्र पात हुआ। इसी प्रकार अन्य प्रवृत्तियों का भी है। इन में से अनेक का द्विवेदी काल में पूर्ण विधान पाते हैं।

[illegible]

एक बार तो नए रचना या काव्य रचना की बाढ़ ही आ जाती है नई बोली में, जब कि उसमें नई विविध संभावनाएँ फूटने लगती हैं। द्विवेदी काल की मुख्य प्रवृत्तियाँ यहीं समाप्त हो जाती हैं। अब आगे उसका (खड़ी बोली रचना का) विकास काल आता है, जब वह पूर्ण परिपुष्ट हो विविध शैलियों और रूपों में विकसित होती है। द्विवेदी जी स्वयं प्राचीनता से परम अलग थे, पर उसे ऐसा रूप देना चाहते थे, जो आधुनिक काल के अनुसार परिवर्तित हो, पर जिसका मूल आधार प्राचीन भारतीय ही हो। इस बात में वे भारतेन्दु जी के समान ही थे। वे नव विकास के भी विरोधी नहीं थे। पर उसे प्राचीनता से सर्वथा पृथक् या विरुद्ध नहीं चाहते थे। अतएव उनका काल उसी तक वस्तुतः रहता है जब तक हिन्दी काव्य पूर्ण परिपुष्ट हो विकसित नहीं होने लगता। उनका उद्देश्य भी हिन्दी साहित्य को समर्थ परिपुष्ट और व्यवस्थित करने का ही था, जो उनके प्रभाव काल में पूर्णतया सिद्ध हुआ। वैसे तो हिन्दी के सौभाग्य से वे बहुत दिनों जीवित रहे और अपने प्रयत्नों को फलता देखकर सन्तोष प्राप्त करते रहे, पर उनका कार्य-काल वस्तुतः उसी समाप्त हो जाता है, जब खड़ी बोली का रूप स्थिर तथा स्थिर हो जाता है और उसका साहित्य या काव्य पुष्ट हो जाता है। उनके काल में भी काव्य शैलि अधिकतर वर्णनात्मक ही रही, विभिन्न ऐतिहासिक या पौराणिक कथानकों का खड़ी बोली पद्यों में वर्णन हुआ। प्रबन्ध काव्य या कथा काव्यों में बीच २ में ऐसे स्थल भी अवश्य हैं जो उत्तम भाव प्रधान कविता कही है, पर स्वतन्त्र भाव तत्व को लेकर कविता नहीं हुई, जैसा कि बाद के काल में अंग्रेजी की लीरिक कविता के ढंग पर हुआ। द्विवेदी काल वस्तुतः हिन्दी काव्य में, व्यवस्था और परिपोषण का काल है, जिसमें प्राचीन रूढ़ियों को आधुनिक रूप देकर या व्यर्थताओं को छोड़कर उनको निभाने का प्रयत्न किया गया है। इस काल के अनन्तर ही नवीन काल या विकास काल प्रारम्भ होता है, जिसमें हिन्दी काव्य शैलियों विकास के साथ २ विषयों में भी परिवर्तन होता है और समाज के और की के दृष्टिकोण में भी भारी अन्तर आता है। यह द्विवेदी काल का उत्तर का या पूर्वोत्तर उत्थान कहा जा सकता है।

का आदर्श होता है, भाव व्यंजना की विधि बदलती है और काव्य रचना के सिद्धान्त भी बदलते हैं। कवि का दृष्टिकोण भी बदलता है। अब उसे आत्मा या परमात्मा की अनुभूति में, या बड़े २ ऐतिहासिक व्यक्तियों के वर्णन में रुचि नहीं है। अब वह साधारण और प्राकृत पीड़ित जन के दर्शन की ओर ध्यान देता है। व्यक्ति का उसके लिए विशेष महत्व हो जाता है। व्यक्तिगत मन की आकांक्षाओं का चित्रण उसके लिए अधिक सरल होता है। शृंगार में स्थान करता और अश्लील का स्थान मानव प्रेम ले लेता है। कवि एक ओर स्वीन्द्र के अनुकरण में कल्पनालोक या छायालोक की भी सैर करता है और दूसरी ओर नारी को केवल भोग में वस्तुवादी बनता है। राजनीति और समाज के इस उलट पुलट और संघर्ष के युग में हिन्दी साहित्य भी विविध शैलियों में नए और विचारधाराओं में से निकलता होता हुआ अपने इस अवस्था का पहुँचता है। अभी यह विकास काल ही चल रहा है और अब तक छायावाद, छायावाद, वस्तुवाद, हालावाद, वादावाद, प्रगतिवाद, प्रयोगवाद आदि अनेक वाद आ चुके हैं। इस विकास की प्रक्रिया में आगे क्या परिवर्तन होगा, यह कहना भी कठिन है, पर विश्व और दृष्टिकोण के विकास से व्यक्तिवाद और समाज के साथ, पुराना आधुनिक काल समाप्त हो जाता है और नवीन काल या व्यक्तिवाद-काल प्रारम्भ हो जाता है।

हिन्दी का नया और पुराना साहित्य या काव्य साहित्य इस समय उपस्थित किया हुआ है। जिसकी अवधारणा और व्यक्तिवाद का कोई आधार नहीं है, जिसमें न अनेक अवधारणा, आधार निकल रहे हैं और छोटे छोटे प्रवाहों का भी जन्म हो रहा है। आगे भी क्या विकास होगा है और कह सकता है?

प्रश्न—संक्षेप में समस्त आधुनिक काल के नयी धारा काव्य साहित्य का मूल्यांकन प्रस्तुत करें।

उत्तर— [illegible]

१६ प्रकृति वर्णन में विशेषता आती है, प्रकृति को कवि जड़ मूक नहीं समझता। प्रत्युत, वह उसके स्थूल सौन्दर्य में निहित आन्तरिक चैतन्य शक्ति का भी दर्शन करके विमुग्ध होता है। प्रकृति उसके लिये एक स्वतंत्र विषय बन जाती है।

१३. संस्कृत, बंगला, मराठी, गुजराती, फ्रेंच, अंग्रेजी आदि भाषाओं के काव्यों का अनुवाद भी होता है और मौलिक रचना भी होती है।

१४ काव्य कला की संस्कृत अंग्रेजी आदि प्रमुख भाषाओं के साहित्य कलाधार पर सर्वांग आधुनिक वैज्ञानिक ढंग में व्याख्या आलोचना विवेचन आदि होते हैं।

महाकाव्य आदि इस पद्य साहित्य की मुख्य विशेषताएं हैं।

प्रश्न हिन्दी के आधुनिक पद्य साहित्य में या काव्य साहित्य में अभिव्यंजनावाद, रहस्यवाद, छायावाद आदि वादों का संक्षेप में परिचय दो।

उत्तर—इन वादों के विकास में गांधी जी और रवीन्द्र जैसे महापुरुषों का विशेष प्रभाव पड़ा है। गांधीजी कवि वस्तुवादी या यथार्थवादी होने पर भी एक महान रहस्यवादी थे। वह उनकी गीता की आध्यात्मिक व्याख्या में स्पष्ट हो जाता है। उनका सत्यरूप विशाल आत्मैक्यवाद एक रहस्यमय आध्यात्मिक चेतना के दृढ़ित पर टिका था। इसे वे स्वीकार भी करते थे। और रवीन्द्र ने तो संध्या कविता में प्रकाशित हो उसी लोकोत्तर रहस्य में रत हो छायावाद और रहस्यवाद की कविता लिखी थी। नोबल पुरस्कार लिखने के पश्चात् तो उनकी शैली का रूप ही अलग हुआ। फलतः इन दोनों ही महान् व्यक्तियों के प्रभाव से पद्यबद्ध हिन्दी में भी रहस्यवाद और छायावाद का जन्म होता है

छायावाद रहस्यवाद - इन दोनों में से किसी एक का भी विशेष प्रभाव नहीं, दोनों ही शैली के साथ भाव का भी परिवर्तन [illegible] स्वतंत्र विषय के आधार पर काव्य रच गया है। [illegible] रहस्यवाद में [illegible] अनुभूति का विविध रूपों में वर्णन होता है। दूसरे शब्दों में [illegible] अनुभूति के साथ ही पूर्ण के लिए भाव है, का सम्बन्ध होता और दुःख के लिये और कुछ नहीं दीखता

कुछ ही भेद है। छायावाद में कवि अपनी आत्मा के ही प्रतीक या छाया की अनुभूति करता है और रहस्यवाद में कवि जगत् में अनन्त परमात्मतत्त्व को छाया या प्रतीक देखता है। छाया या प्रतीक का दोनों दर्शन करते हैं, अनुभूति का प्रकार भी समान है दोनों में, अन्तर केवल विषय (आत्मा और परमात्मा) के अनुसार पड़ता है। छायावादी सान्त (अपनी आत्मा) की अनुभूति करता है, दूसरा अनन्त की।

इन दोनों ही रूपों में भगवान् की उपासना भारत में अत्यन्त प्राचीन काल से चली आती है। ज्ञानोपासना में एक ही ब्रह्म की सर्वत्र पर अपर जगत् में अनुभूति की जाती है और भक्ति मार्ग में अनन्त की सान्त रूप में साम्य कल्पना कर (अपनी आत्मा को दृष्टा के अनुरूप) उसकी अनुभूति की जाती है। अतएव भक्ति मार्ग को प्रतीकोपासना भी कहा जाता है। उपनिषदों में ऐसे वर्णन बहुत मिलेंगे, जिन्हें हम निस्संकोच रहस्यवाद और छायावाद की परिधि में ला सकते हैं। अतएव यह कहना कि इन वादों का परिचय अंग्रेज़ों से ही मिला, गलत है, हाँ आधुनिक युग में चलन इनका अंग्रेज़ों के अनुकरण पर हुआ और इनको शैली आदि को भी आधुनिक रूप में कल्पना अंग्रेज़ी कविता के प्रभाव में हुई। परन्तु इस प्रकार की वर्णन पद्धति भारतीय साहित्य में प्रारम्भ से चली आई है। कबीर और जायसी के साहित्यों में बहुत छायावाद और रहस्यवाद मिलता है। प्रसाद जी पर तो सिर्फ़ बाद रूप से कबीर और उपनिषदों के रहस्य भाव का प्रभाव पड़ा था। इस प्रकार, ये दोनों शैलियाँ आधुनिक रूप में अंग्रेज़ों से प्राप्त होने पर भी, रूप भेद से भारत के साहित्य में प्रथमतः विद्यमान् थीं।

वस्तुवाद या यथार्थवाद वस्तु स्थिति के वर्णन से होता है। कवि कल्पना को उड़ानें भरकर स्वप्नलोक में विचरण नहीं करता, अपितु इसी दुनिया की बात करता है। दुनिया के केवल आनन्द ही का वर्णन नहीं करता, अपितु उसके दुःख आपत्तियों का भी वह वर्णन करता है, जो जीवन में अधिक हैं। यह वस्तु स्थिति के वर्णन करने की शैली को यथार्थ-वाद कहते हैं। इसमें कवि का आधार निरी कल्पना न होकर जीवन के कठोर सत्य होते हैं।

के लिए प्रगति (मार्क्स) का विगुल फूंकना है। वह वर्तमान संसार व्यवस्था, जिसमें ऊँच नीच का भेद मिटकर समानता नहीं आ सकती, में कोई परिवर्तन संभव नहीं समझता। अतएव उसका ध्वंस ही इलाज समझता है। परन्तु अरविन्द के सुख संसार का निर्माण करना चाहता है, जिसमें निर्धन मजदूरों की आवाज़ प्रबल होगी और कोई ऊँचा नहीं होगा, सब समान सुखी या दुःखी होंगे। स्पष्ट ही आदिम में वह धारा राजनीति में समाजवादी विचारों के अक्षरशरूप चली। इसमें जहां उग्रता या क्रांति की मात्रा अधिक है वहां और भी अधिक वाम पक्षीय (Leftist) कम्यूनिस्टों का प्रभाव मानिये। वहां कवि संसार में आग लगाकर साम्यवाद के आधार पर नव निर्माण करने के सिवाय और कोई मार्ग नहीं देखता। वह इसी में विश्व का मंगल देखता है।

इन्हीं के साथ एक और धारा भी चलती है जिसे क्रमशावाद कह सकते हैं। महादेवी वर्मा का साहित्य इसका अच्छा उदाहरण है। इस धारा में कवि का स्वर अधिक करुण रस में ही आनन्द पाता है। वह संसार में सर्वत्र करुणा ही करुणा देखता है और इसी की अनुभूति में उसका आनन्द मिलता है। संस्कृत में ऐसे कवि अवभूति थे, जो करुणा का ही रस मानते थे। इसका मत था करुण ही एक रस शृंगार आदि विविध रसों का रूप ग्रहण करता है, जैसे एक ही अग्नि विविध आकृति के पात्रों में विविध रूपों का ग्रहण कर लेता है। हिन्दी में यह धारा या पद्धति संस्कृत के अनुकरण पर ही आती है या यह विचार-धारा है बहुत पुरानी। बौद्ध सिद्धान्त भी संसार में दुःख ही अधिक मानता है सुखको दुःख का अभाव माना जाता है। वेदान्त में भी दुःख बाद की एकाएक विचार धारा है हिन्दी साहित्य में ऐसी धारा चली, जिसमें कविता के करुण को [illegible] और इसका [illegible]

खड़ी बोली के कवि

[illegible]

परिशीलन से मिली थी, जिसके ये पक्षिक थे और जिसमें संस्कृत वृत्त प्रणाली का अधिक उपयोग हुआ है। द्विवेदी जी आचार्य पहिले थे। कवि पीछे। अतएव इनकी कविताओं में भाषा-परिष्कार और काव्य-चातुर्य अधिक है और कवित्व अपेक्षाकृत कम है। इनकी कविताएँ काव्य-मंजूषा और सुमन नामक दो संग्रह ग्रन्थों में संग्रहीत मिलती हैं। एक उदाहरण—

सुरभिवान मंजुल शैया पर पहिले जिन्हें बिठाते थे।
सुरभि और मंगल गीतों से प्रात जगाया जाता था। आदि।

मैथिली शरण गुप्त—इनका कविता काल १९१३ में सरस्वती में प्रकाशन से प्रारम्भ होता है। द्विवेदी जी की प्रेरणा और उत्साह से इनकी अधिक से अधिक और सुन्दर से सुन्दर रचनाएँ निकलने लगीं। इन्होंने कई खण्ड काव्य, छोटे प्रबन्ध काव्य और महाकाव्य लिखे हैं। इनकी प्रसिद्धि का कारण इनका भारत भारती नामक काव्य हुआ था जिसमें भारत की या हिन्दुओं की भूत और वर्तमान अवस्था का करुणोद्वेजक अन्तर दिखाया गया है। इसी के आधार पर इन्हें राष्ट्रीय कवि की भी उपाधि मिली है। इन पर गांधी जी का विशेष प्रभाव पड़ा था और ये उन्हें के अनन्य भक्त हैं। इन्होंने रंग में भंग, जयद्रथ वध, विकट भट, पलासी का युद्ध, गुरुकुल, किसान, पंचवटी, यशोधरा आदि काव्य और खण्डकाव्य लिखे हैं। इनके अतिरिक्त साकेत नामक महाकाव्य भी लिखा है, जिसमें राम कथानक का चित्रण है। रामचरितमानस में विशेषता यह है कि इन्होंने लक्ष्मण की पत्नी उर्मिला और भरत की पत्नी का विशेष विस्तृत और सजीव वर्णन किया है। राम चरित्र लिखने वाले अन्य सब लेखकों ने इनकी ओर विशेष ध्यान नहीं दिया था। इनके अतिरिक्त इन्होंने अनघ, तिलोत्तमा, [illegible] नामक नाटक रूपक काव्य और कुछ स्फुट पद्य भी लिखे हैं। आजकल ये चिरगाँव झाँसी में शान्ति में अपना साधना में लिप्त हैं। उदाहरण—

[illegible]

नाथूराम शंकर—ये अज भाषा [illegible] में लिखते थे।

ये जितने कवि थे, उतने ही भाषा और काव्य के मर्मज्ञ आचार्य भी थे इन्होंने एक बोलचाल नामक ग्रन्थ भी लिखा था, जिसमें सच्ची बोली में प्रचलित समस्त मुहावरों और लोकोक्तियों का इन्होंने सच्ची बोली पद्य में प्रयोग किया है। उदाहरण—

दिवस का अवसान समीप था गगन था कुछ लोहित हो चला।
तरु-शिखा पर थी अब राजती कमलिनी-कुल-वल्लभ की प्रभा॥

सियाराम शरण गुप्त—जन्म १९६२ वि०। ये श्री मैथिलीशरण जी के छोटे भाई हैं। स्पष्ट ही इनको अपने बड़े भाई और आचार्य द्विवेदी जी से पर्याप्त ही साहस नेतृत्व मिला। इन्होंने अत्यन्त सुन्दर फुटकल कविताएँ लिखी हैं, जिनका संग्रह आर्द्रा, दूर्वादल और विषाद नामक संग्रहों में हुआ है। इनके अतिरिक्त अनाथ, मौर्य विजय नामक छोटे काव्य भी लिखे हैं। उदाहरण—

मेरी हुआ विरत्व भर मेरा, हाय कहां अब जाऊं मैं? आदि।

पं० माखनलाल चतुर्वेदी—ये १९४३ वि० में जन्मे थे, और अभी कलकत्ता के विशाल भारत मासिक का सम्पादन कर रहे हैं। ये सक्रिय राष्ट्रवादी हैं। भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन में इन्होंने पूरा भाग लिया था माधवराव सप्रे के सहयोग में एक कर्मवीर नामक पत्र भी निकाला था। बलिदान, हिमकिरीटिनी, हिमतरंगिनी, पुष्प, माता, युगचरण, समर्पण आदि अनेक इनकी उच्चकोटि की राष्ट्रीय रचनाएं हैं। ये कवि होने के साथ सफल सम्पादक भी हैं। उदाहरण—

अजब रूप धर कर आये हो, कवि कहूं तुम्हें या नाम कहूँ।
रमण कहूँ या रमणी कहूं तुम, रमा कहूँ या राम कहूँ॥

रामनरेश त्रिपाठी—इन्होंने राष्ट्रीय कविताएं अधिक लिखी हैं। इनके अतिरिक्त मिलन, पथिक, स्वप्न नामक खण्ड काव्य भी लिखे हैं। इनकी कविता सरस और सरल है। उदाहरण—

मैं तुझको तुझ था जब तू न और बन में।
तू खोजता मुझे था तब दीन के वतन में॥ आदि।

उत्तर—द्विवेदी जी के काल में, खड़ी बोली पद्य में इतना तो बहुत होने लगी थी, पर उसमें वृत्ति-मूलात्मकता (वर्णन शैली) अधिक थी। कवि भाषा को शुद्ध परिमार्जित रूप में छन्द में बिठा कर अपने को कृत कृत्य समझने लगा था, भाव पक्ष कमजोर और थोड़ा आता था, अधिक किया कवि की भाषा की रहनी थी। कुछ एकरूप लोग खड़ी बोली की अधिकांश कविताओं को कोरी तुक-बन्दी मात्र मानने लगे थे। काव्य के विकास का इस प्रकार अवरोध सा हो जाने पर, प्राचीन प्रचलित काव्य-पद्धति से असन्तुष्ट होकर उसकी प्रतिक्रिया-स्वरूप बंगला और अंग्रेजी के अनुकरण पर काव्य में नवीन कई शैलियों का विकास होता है, जो छायावाद आदि नामों से प्रसिद्ध हुईं। इस पद्धति के कवियों में सर्व प्रथम बा० जय शंकर प्रसाद जी का नाम आता है।

बाबू जय शंकर प्रसाद—छायावाद और रहस्यवाद के ये सर्वप्रथम कवि माने जाते हैं, जिनका आदर्श आगे के अधिकांश कवियों ने ग्रहण किया। इनका काल १९४६—१९९२ है। ये काशी में रहते थे। बचपन में ही पिता का देहान्त हो जाने पर और घर का भार पड़ जाने के बाद भी आपने संस्कृत प्राकृत, फारसी अंग्रेजी का पर्याप्त ज्ञान प्राप्त किया था। ये प्रेमी से भावुक और कवि थे। प्राचीन भारतीय आदर्शों, हृदय और अनेक आपत्तियों को झेलने से इनका आध्यात्मिक दृष्टिकोण भावुक हो गई थी। अतएव इनकी रचनाओं में भी आध्यात्मिक रहस्य वाद का आभास ही अधिक मिलता है। इन्होंने सब प्रथम खड़ी बोली में संस्कृत के ढंग पर अनुकाव्य कविता लिखी थी। इनकी रचनाएं काव्य कुसुम प्रेम पथिक अयोध्या चन्द्र गुप्त और (बाद्ध [illegible]) हैं।

[illegible]

[illegible]

उत्तर—द्विवेदी जी के काल में, खड़ी बोली पद्य में रचना तो बहुत होने लगी थी, पर उसमें इति-वृत्तात्मकता (वर्णन शैली) अधिक थी। कवि भाषा को शुद्ध परिमार्जित रूप में छन्द में बिठा कर अपने को कृत कृत्य समझने लगा था, भाव पक्ष कमजोर और थोड़ा आता था, अधिक चिन्ता कवि को भाषा की रहती थी। फल स्वरूप लोग खड़ी बोली की अधिकांश कविताओं को कोरी तुक-बन्दी मात्र मानने लगे थे। काव्य के विकास का इस प्रकार अवरोध सा हो जाने पर, प्राचीन प्रचलित काव्य-पद्धति से असन्तुष्ट होकर उसकी प्रतिक्रिया-स्वरूप बंगला और अंग्रेजी के अनुकरण पर काव्य में नवीन कई शैलियों का विकास होता है, जो छायावाद आदि नामों से प्रसिद्ध हुईं। इस पद्धति के कवियों में सर्व प्रथम बा० जय शंकर प्रसाद जी का नाम आता है।

बा० जय शंकर प्रसाद—छायावाद और रहस्यवाद के ये सर्वप्रथम कवि माने जाते हैं, जिनका आदर्श आगे के नवीन कवियों ने ग्रहण किया। इनका काल १८९०—१९३७ है। ये काशी में रहते थे। बचपन में ही पिता की मृत्यु हो जाने पर और घर का भार पड़ जाने के बाद भी आपने संस्कृत प्राकृत, फारसी अंग्रेजी का पर्याप्त ज्ञान प्राप्त किया था। ये प्रारंभ से भावुक और कवि थे। प्राचीन भारतीय साहित्य देखने और अनेक आपत्तियों को भोगने से इनकी आध्यात्मिक पिपासा जागृत हो गई थी। अतएव इनकी रचनाओं में भी आध्यात्मिक रहस्य वाद की मात्रा ही अधिक मिलती है। इन्होंने सर्व प्रथम खड़ी बोली में संस्कृत के ढंग पर अनुकान्त कविता लिखी थी। इनकी रचनाएं कानन कुसुम, प्रेम पथिक, सम्राट चन्द्र गुप्त मौर्य (नाटक) अजात शत्रु, स्कन्द गुप्त, (नाटक) तितली (उपन्यास) राज श्री आदि अनेक हैं। ये एक उत्तम कोटि के भावुक कवि होने के साथ साथ अच्छे नाटक कार और उपन्यास लेखक भी थे। उदाहरण —

भरा नैनों में मन में रूप, किसी बृजिया का अमल अनूप। आदि।

सूर्य कान्त त्रिपाठी निराला—जन्म संवत् १९५६। स्थान उन्नाव जिला। इन्होंने भी छायावाद रहस्यवाद में लिखा है। अंग्रेजी के ढंग के गीत

आपने कुछ वर्णनात्मक काव्य रचनाएं लिखीं, और इनमें, कुछ [illegible] चित्रण और विलीन की चिंता, इनकी ऐसी ही वर्णनात्मक ढंग की [illegible] रचनाएं हैं। इनके अतिरिक्त अंजलि, अभिशाप, चित्रोत्सा, चन्द्र [illegible] शिशिर आदि नवीन शैली की भाव प्रधान रचनाएं लिखीं, जो मुख्यतः [illegible] भावों और प्रकृति वर्णन की कविताएं हैं। प्रकृति वर्णन इनका परम [illegible] चित्र और प्रकृति की नवीन उपकरण छाया लिये है। उदाहरण—

> हृदय एक है उसमें जितनी ओर लगी है आग,
> इसे शान्त करने को लोचन बरस रहे हैं त्याग। आदि।

सुभद्राकुमारी चौहान—ये यद्यपि छाया वादी परम्परा में [illegible] आती, किन्तु इसी काल की वस्तुवादी नवीन धारा की कवयित्री हैं। कविताओं में नवीनों का सरल सुन्दर सरस और स्वाभाविक चित्रण हुआ इन्होंने अधिकतर राष्ट्रीय, वीर रस की, और वात्सल्य रस की कविताएं लिखी हैं। वीर रस की कविताएं इनकी जितनी ओजस्विनी हैं वात्सल्य और करुण रस की कविताएं इनकी उतनी ही मधुर और [illegible] होती हैं। इनकी [illegible] वर्णनात्मक और भावात्मक दोनों प्रकार की कविताएं [illegible] जिस इनकी वीर रस की ओजस्वी [illegible] वर्णनात्मक [illegible] वात्सल्य [illegible] उदाहरण—

[illegible]
[illegible]